राजमुकुट

संपादक
श्रीदुलारेलाल भार्गव
(सुधा-संपादक)

गंगा-पुस्तकमाला का १४६वाँ पुष्प

राजमुकुट

[सचित्र ऐतिहासिक नाटक]

लेखक

पं० गोविंदवल्लभ पंत

(वरमाला, संध्या-प्रदीप, प्रतिमा, मदारी

आदि के रचयिता)

मिलने का पता—

गंगा-ग्रंथागार

३६, लाटूश रोड

लखनऊ

प्रथमावृत्ति

सजिल्द १॥)] सं० १९९२ [सादी १)

प्रकाशक

श्रीदुलारेलाल भार्गव

अध्यक्ष गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय

लखनऊ



मुद्रक

श्रीदुलारेलाल भार्गव

अध्यक्ष गंगा-फ़ाइनआर्ट-प्रेस

लखनऊ

भूमिका

हिंदी-साहित्य के प्रमुख नाटककारों में पं० गोविंदवल्लभ पंत का स्थान विशेष ऊँचा है। उनकी कृतियों ने यह सिद्ध कर दिया है कि साहित्यिक नाटक भी स्टेज-अभिनय की दृष्टि से सफल हो सकते हैं। 'वरमाला' नाटक-साहित्य की, वास्तव में, वर माला ही सिद्ध हुई है। पंतजी की मार्मिक कल्पना और प्रखर प्रतिभा का नया रूप 'राजमुकुट' हिंदी-संसार के सामने है।

कहना न होगा कि ऐतिहासिक नाटकों की रचना में पतजी ने एक नवीन युग का निर्माण किया है। उनकी शैली में ओज है, उनकी भाषा में प्रवाह है, और उनकी कृति पर अनुभवशीलता की छाप है। 'राजमुकुट' राजपूताने की एक प्राचीन गौरव-गाथा है। वीरांगना पन्ना का नाम किसने न सुना होगा! वही धाय पन्ना, जिसने स्वामिभक्ति की वेदी पर अपने दुधमुँहे बच्चे का बलिदान देकर मेवाड़ की वंश-बेलि को नष्ट होने से बचाया! वही क्षत्राणी पन्ना, जिसका अनुपम त्याग, जिसकी अपूर्व देश भक्ति राजस्थान की महिलाओं के आदर्श की जीती-जागती कहानी है! 'राजमुकुट' उसी की एक उज्ज्वल स्मृति है।

ऐतिहासिक सत्य को सर्व-सुलभ साहित्य का रूप देने में कल्पना का आश्रय अवश्य लिया जाता है। पंतजी के भी कुछ पात्र कल्पित हैं, किंतु यह कल्पना भी इतनी समयानुकूल और उपयुक्त है कि इससे उस सत्य की पूर्ति होती है, जो घटना-काल की दृष्टि से विस्मृत और अनुसंधान से परे है।

'राजमुकुट' की विशेषता है उसका मनोवैज्ञानिक विकास। दृश्यावली और पात्र-योजना का घटनाओं से अच्छा सामंजस्य पाया जाता है। नाटक को अभिनय-योग्य बनाने के लिये उपर्युक्त बातों की बड़ी आवश्यकता होती है। पंतजी का दृष्टिकोण उनकी कृति की सफलता का प्रथम कारण है। 'राजमुकुट' में विषय-निर्वाह और कथानक का विकास सराहनीय है। हिंदी के नाटकों में यह पहला अवसर है, जब किसी नाटककार ने रसावेश को स्थायी रखते हुए कथानक की मर्यादा को नष्ट नहीं होने दिया है।

देश-भक्ति, राजभक्ति और स्वामिभक्ति के अनेकों उदाहरणों में से 'राजमुकुट' के आदर्श का उदाहरण मिलना कठिन है। नाटक का आधार पन्ना (एक स्त्री) है। विरोधी पात्र शीतलसेनी भी एक स्त्री है। दोनो का चरित्र-चित्रण बड़े मार्के का और रोचक है। स्त्रियों की शक्ति कितनी प्रबल और उनकी महत्ता कितनी असीम होती है, यह इस नाटक में अच्छी तरह दिखाया गया है। स्वदेश के लिये अपने प्राणों से भी प्यारे पुत्र को घातक की तलवार के आगे डाल देना एक माता की स्वामिभक्ति का आदर्श है। वीरांगना पन्ना का चरित्र भिन्न भिन्न परिस्थितियों में भी सर्वोच्च और व्यापक दिखाई देता है। 'राजमुकुट' का आधार है पन्ना, और पन्ना का पात्र-चित्रण नाटककार की कुशलता और प्रतिभा का परिचायक है।

'राजमुकुट' पंतजी की एक सुंदर कृति है। हमें आशा है, हिंदी-जगत् उसका आदर करेगा। तथास्तु।

कवि-कुटीर
लखनऊ }   संपादक

पात्रगण

१. विक्रमसिंह— मेवाड़ के महाराना
२. उदयसिंह— विक्रमसिंह के भाई
३ बनवीर— शीतलसेनी के पुत्र
४. कर्मचंद— बूढ़े प्रधान सरदार
५. जयसिंह— कर्मचंद के पुत्र
६. रणजीत— एक लोभी सरदार
७. बहादुरसिंह—पन्ना का पति, एक हाथ-कटा सिपाही, बाद को तांत्रिक
८. चंदन— पन्ना का बेटा
९. ईशकर्ण— डूँगरपुर के राजा
१०. आशाशाह— कमलमीर के राजा
११. चुंदावत— एक सरदार
१२. ईशकर्ण के सेनापति
१३. बारी
१४. योगी

प्रजागण, सरदारगण, राजपुरोहित, वधिक, प्रहरी और तांत्रिकगण

❀ ❀ ❀

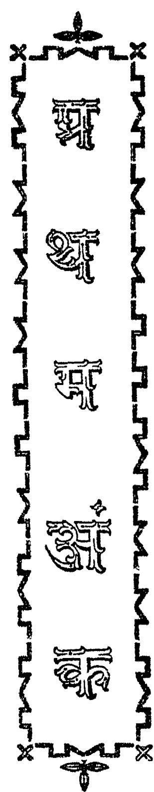
१५. पन्ना— उदयसिंह की धाई
१६. शीतलसेनी— बनवीर की माता

आशाशाह की माता, एक दु:खिनी और नर्तकियाँ

मंगलाचरण-वंदना

शंकरा—चार ताल

मंगलमय ! मंगल कर।
सर्वमगला के वर ॥ म० ॥
पावन कर, अघहर, हर ॥ मं० ॥
त्रिनयन, त्रिभुवनाधार,
त्रिपुरारी, त्रिशूल-कर ॥ मं० ॥
विष-धर, विषधर-धर, शशधर-शशि-धर,
सुरसरि-धर, पिनाक-धर, डमरू-धर ॥ मं० ॥
अमल, धवल, अजर, अमर,
सदय, सरल, प्रलयंकर,
जयति-जयति-जय ! शंकर !! मं० ॥


प्र थ म अं क

प्रथम दृश्य

चित्तौड़ के महाराना विक्रम का विलास-कक्ष

[आधार पर सुरापात्र हैं, उपस्थित—मुँह
लटकाए, बाएँ गाल पर हथेली रक्खे अकेले
विक्रम ।]

विक्रम—मनुष्य का जीवन बहुत ही छोटी वस्तु है। [उत्ते-जित होकर ।] मेरे सुख की इच्छाएँ इसी जन्म मे क्यो न पूरी हो ? मैं अपने मन मे क्यो चिंता का मैल जमने दूँ ?

[रणजीत का प्रवेश ।]

रणजीत— इसे धो डालो, महाराज !

[सुरापात्र उठाकर विक्रम को देता है ।]

विक्रम—यह सुरा का पात्र है, लाओ रणजीत, तुम मेरे सबसे अधिक हितैषी हो। यह जल से अधिक उपयोगी होगा। जीवन की क्षणिकते ! तेरा विचार दूर हो। संसार के सुख-भोग ! मै किसी भाव तुझे मोल लूँगा।

[सुरापात्र लेकर पीता है ।]

दुःखिनी—[नेपथ्य से] रक्षा ! रक्षा !

विक्रम—अब कैसी रक्षा ? अब विक्रम ने सुधा का पात्र

रिक्त कर दिया है। अब कुछ भी न हो सकेगा। तुम जो भी हो, लौट जाओ। फिर कभी यदि मुझे होश मे पा सको, तो आना, नहीं तो जाओ, तुम भी उसी झुंड मे प्रवेश करो, जो विक्रम से पीड़ित होकर उसके सिहासन को उलटना चाहता है।

रणजीत—[तलवार खींच कल्पित लक्ष्य साधकर।] सावधान ! तुम यदि देवराज इंद्र भी हो, तो महाराना विक्रम का बाल बॉका करने से पहले तुमको रणजीत से सामना करना होगा।

विक्रम—रणजीत ! तुम हो ? मेरे सहायक !

रणजीत—हाँ, सेवक रणजीत ही है।

विक्रम—तो कुछ भी भय नहीं है ?

रणजीत—मेरे प्राण रहते कुछ भी नहीं।

विक्रम—लाओ, लाओ, एक बार फिर इस प्याले को भरो कि यह फिर रिक्त हो सके, क्योकि भय कुछ भी नहीं है।

[रणजीत फिर सुरापात्र भरकर विक्रम को देता है। विक्रम फिर पीता है। दुःखिनी अपने दो बच्चों के साथ आती है।]

दुःखिनी—रक्षा ! रक्षा ! [भूमि पर शीश झुकाती है।]

विक्रम—कौन ?

दुःखिनी—दुःख से पीड़ित, विपत्ति की मारी।

विक्रम—अभागिनी ! मेरे गीत के लिये क्यों विवादी स्वर लेकर आई ?

दुःखिनी—यह क्या सुनती हूँ चित्तौड़-कुल-भूषण ! इस वंश ने सदैव दीन और आर्त की सुनी है।

विक्रम—जा, जा, मैं कुछ भी न सुनूँगा। इस वंश मे अब तेरी चैन की वंशी नही बज सकती। यदि तू चिल्लावेगी, तो मै अपने उत्सव के गीतो को अंतरित कर तार ग्राम में ले चलूँगा। उसमे तेरा क्रंदन डूब जायगा।

दुःखिनी—आप यह क्या कह रहे हैं, महाराना ! देश के प्रत्येक सिरे मे अकाल छाया हुआ है, प्रजा भूख से तड़प-तड़पकर मर रही है।

विक्रम—उसे मरने दो। क्या मैंने उसकी फ़सल काटी है ? देश मे अकाल पड़ा है, तो क्या बादलो का राजा मैं हूँ ?

दुःखिनी—मैं भीख माँगकर अपने बाल-बच्चो का पालन कर रही थी। आपके कर्मचारियों ने कोई बर्तन भी नही छोड़ा। मै क्या करूँ ?

रणजीत—किसी अँधेरे देव-मंदिर मे अपने फूटे भाग्य के लिये दीपक जला। जा, निकल यहाँ से। [निकल जाने का संकेत करता है।]

दुःखिनी—तुम राजा के झूठे मित्र हो, तुम्ही ने इन्हे कुमार्ग दिखाया है। विक्रम राजतिलक के समय ऐसे नही थे। मै महाराना के न्याय की भिखारिन हूँ। [अंचल पसारकर घुटने टेकती है।]

विक्रम—जा, जा, चली जा, यह मेरा ही न्याय है। निकालो रणजीत !

[रणजीत दुःखिनी को निकालना चाहता है। उसके इस प्रयास म दुःखिनी के दोनो बच्चे रोते हुए बाधा डालते हैं।]

दुःखिनी—क्या यही राणा का न्याय है ? क्या संग्रामसिह के साथ चित्तौड़ का गौरव समाप्त हो गया ? मेवाड़ का सूर्य डूब गया ?

विक्रम—कोई है ? इस चुड़ैल को यहाँ से निकालो। [प्रहरी का आना। प्रहरी और रणजीत दोनो का उसे और उसके बच्चों को धक्का देकर निकालना।] यहाँ इस तरह अब किसी को न आने देना।

प्रहरी—जो आज्ञा। [जाता है।]

विक्रम—इस तरह ओट मे छिपी हुई तुम किसकी प्रतीक्षा में चुप हो, क्या बात है ? [दोनो ओर देखता है, जहाँ नर्तकियाँ खड़ी थीं। संकेत पाते ही आकर नाचने लगती हैं।]

भैरवी—तीन ताल

किरीट-मुकुट की, लटकी लट की,
नागर नट की छवि मन अटकी।

[१]

मिली व्यथा चुप हो सहने को,
मन का भेद नहीं कहने को।

सुन, फिर सुरभित हुई है पवन—
सात स्वरों से वशी-वट की।

[२]

कानन फिर मुखरित भयो, कान नचत दै तारि;
कान न राखि सकौं सखी! कानन आँगुरि डारि।
बाट चलत मोरी मटकी पटकी।

[३]

सुंदर, श्याम स्वरूप दिखाया,
कहने को कह गया, न आया।
चुभी प्राण में वह सुमधुर स्मृति—
नीले तट की, पीले पट की।

[नेपथ्य म प्रजा का कोलाहल और लाठियों का चलना। नर्तकियाँ भय पाकर गीत बंद कर देती है, और भाग जाती है।]

प्रजा नं० १—[नेपथ्य में] जाने कैसे न देगा?

प्रजा नं० २—[नेपथ्य में] राजा हमारा है, रास्ता छोड़ दो।

प्रजा नं० ३—[नेपथ्य में] लाठी छोड़ो, मार डालो।

[चार दुखी प्रजा का प्रवेश।]

प्रजा १—अकाल और महामारी से रक्षा करो।

प्रजा २—राज्य के बढ़ते हुए करों को हटाओ।

प्रजा ३—ठग, चोर, लुटेरे और राजकर्मचारियों से अभय करो।

चारो प्रजा—अन्याय का दमन करो, हिंदू-सूर्य ! न्याय करो।

रणजीत—कैसा न्याय, क्या यह न्यायालय है ?

प्रजा १—चुप रहो रणजीत ! तुम्हारे झूठे शब्द हमें शांत नहीं कर सकते।

प्रजा २—तुम न्यायालय की बात कहते हो ? बताओ, कहाँ है वह ?

विक्रम—हमारा मन उस मधुर गीत के स्वर्ग में विचर रहा था। तुमने यह किस नरक का द्वार खोल दिया ? चांडालो ! निकलो यहाँ से।

रणजीत—जाओ, जाओ, यह समय महाराज के थके मन को शांति देने का है। तुम्हारी बकवाद के लिये नहीं है। [उन्हें धक्का देकर निकालना चाहता है।]

प्रजा ३—सावधान ! रणजीत, तुम बीच मे न पड़ो।

विक्रम—कोई है ? प्रहरी !

प्रजा ४—प्रहरी हमारे आने मे बाधक हुआ, हम उसे आहत कर आगे बढ़े है।

विक्रम—[तलवार खींचकर सक्रोध] और, क्या तुम अब मेरा वध करने आए हो ? चांडालो ! मै तुम्हे जीता न छोड़ूँगा।

प्रजा १—कुछ भी चिंता नहीं।

प्रजा २—हम यही चाहते है, जीने मे कोई भी सुख नही है। [महाराना के आगे सिर झुका देता है।]

[विक्रम उसे मारने को तलवार उठाते हैं, सहसा चार सरदारों के साथ कर्मचंद आकर राजा का हाथ पकड़ते है।]

कर्मचंद—सावधान महाराज ! निर्धन, निरपराध और निहत्थी प्रजा के ऊपर यह तलवार ! इसे निर्दोष रक्त में सान-कर फिर कहाँ रक्खोगे ?

विक्रम—कौन ! प्रधानमंत्री ? यह राजसभा नहीं है, मेरा विलास-भवन है। यहाँ मेरी इच्छा के ऊपर किसी का राज नहीं। मैं इन वधिकों को निस्संदेह प्राण-दंड दूँगा।

कर्मचंद—तो अपने राजसिंहासन को भी अचल न समझो, इसके नीचे इन्हीं के कंधे है। किंतु सावधान ! यदि आप अपना कर्तव्य भूलते है, तो मै न भूलूँगा। मैं इनकी रक्षा करूँगा। मै इन्हे न मरने दूँगा।

विक्रम—जो बाधा देगा, वही मेरी तलवार का प्रथम लक्ष्य होगा।

कर्मचंद—ऐसा ही सही; लो, मारो। यदि तुम्हारी भुजाओं मे शक्ति और इस तलवार मे तीक्ष्णता है, तो मै भी उस झुके सिर को अधिक झुकाता हूँ, जिसका प्रत्येक बाल मेवाड़ की सेवा मे पक चुका है। [सिर झुकाते है।]

विक्रम—मै इसके लिये भी प्रस्तुत हूँ। [तलवार उठाता है।]

[तलवार खींचे जयसिंह का प्रवेश, और पिता की सहायता के लिये विक्रम के ऊपर वार करना।]

जयसिंह—सावधान !

[तलवार खींचे बनवीर का आकर जयसिंह के वार को अपनी तलवार म ले लेना ।]

बनवीर—खबरदार ! [कर्मचंद जयसिंह के हाथ की तलवार नीची करा देता है।] विक्रम मेरे मित्र और भाई हैं। उनके ऊपर चोट करने से पहले मेरी तलवार की धार भी देखो।

कर्मचंद—तुम क्या करना चाहते थे, पुत्र !

जयसिंह—पिता के प्रति अपने कर्तव्य-पालन के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं।

कर्मचंद—नहीं, नहीं, विक्रम को मैंने गोद खिलाया है। यह मुझे तुम्हारे ही समान प्रिय है। उसने तलवार उठाई, तो क्या हुआ ? वह मेरा वध न कर सकता। इसे भूल जाओ।

जयसिंह—भूल जाऊँ ? आप किस-किससे भूल जाने को कहेंगे ? कौन-कौन भूल सकेगा ? यह देखिए, यह प्रजा की दुर्दशा है !

सब प्रजा—दुहाई है, सरदारों की दुहाई है।

जयसिंह—इनकी दशा देखकर आप मेवाड़ के भविष्य की कैसी कल्पना करते हैं ? प्रजा कब तक शांत रहेगी ?

सब प्रजा—रक्षा करो, रक्षा करो।

जयसिंह—सरदारगण ! जब प्रधान सरदार के लिये राजा

सा स्थान होगा ? कहो, क्या चाहते हो ? मेवाड़ के सिंहासन में न्याय-रहित राजा रहे ?

चारो सरदार—नहीं, वह शून्य ही अच्छा है।

जयसिंह—प्रजागण ! तुम क्या चाहते हो ?

चारो प्रजा—हमारे संकट दूर हो।

जयसिंह—विक्रम से न होंगे।

प्रजा नं० १—तो कोई और उपाय ?

सरदार नं० १—यही कि विक्रम को सिंहासन से उतार दिया जाय।

जयसिंह—यही एक उपाय है; चलो, इसी पर विचार करेंगे। [जाना चाहता है।]

कर्मचंद—पुत्र, यह क्या ?

जयसिंह—आपके अपमान का बदला। चलें, मेवाड़ का कल्याण चाहनेवाले चलें। मैं उन्हें सुख की राह दिखाऊँगा।

[जयसिंह के पीछे चारो सरदार, चारो
प्रजा और कर्मचंद का जाना।]

बनवीर—मैं भी चलूँगा, कदाचित् तुम मेरे भाई विक्रम की ओर विषम पग बढ़ाना चाहते हो। [जाना]

विक्रम—सब चले गए, रणजीत ! तुम नहीं गए ?

रणजीत—रणजीत क्यों जायगा, महाराज ! क्या वह आपका शत्रु है ?

विक्रम—केवल एक मित्र से क्या होगा, रणजीत ! तुम भी जाओ, मै सुरादेवी के साथ इस कक्ष मे अकेला ही रहना चाहता हूँ। [आसन पर बैठना और सुरा-पान करना ।]

रणजीत—[मस्तक पर हाथ रखकर कुछ विचारने के बाद] आपकी यह इच्छा पूर्ण हो, मुझे विद्रोहियो का भेद लेने के लिये जाना चाहिए। मै भी जाता हूँ, महाराना ! [जाना ।]

विक्रम—जाओ, तुम भी जाओ। विक्रम को किसी का भय नहीं है। सरदार विरोधी हो गए, प्रजा विद्रोही हो गई, क्या कोई और भी शेष है ?

[शीतलसेनी का आना ।]

शीतलसेनी—हाँ ।

विक्रम—कौन ?

शीतलसेनी—बनवीर की माता, रानी शीतलसेनी ।

विक्रम—रानी शीतलसेनी ? हा, हा, हा, हा !

शीतलसेनी—यह कैसा व्यंग्य हास्य है, महाराज ! क्या मैं आपके चाचा पृथ्वीराज की स्त्री नहीं हूँ ?

विक्रम—किसलिये आने का कष्ट किया ?

शीतलसेनी—भिक्षा के लिये नहीं, अपना अधिकार प्राप्त करने आई हूँ।

विक्रम—कौन-सा ?

शीतलसेनी—तुम्हे ज्ञात है, महाराना संग्रामसिंह मेरे और मेरे बेटे बनवीर के लिये जो मासिक वृत्ति नियत कर गए थे,

वह हमे कब से नहीं मिली, तथा मैंने कितनी बार उसके लिये व्यर्थ प्रार्थना नहीं की ?

विक्रम—वृत्ति नहीं मिलती, तो क्या तुम भूखी मर रही हो ?

शीतलसेनी—भूखे मरने की बात छोड़ो, विक्रम ! होश मे आओ, क्या मेरी मॉग न्याय-संगत नहीं है ?

विक्रम—होगी, पर इस समय जाओ। राजकोष रिक्त है, फिर कभी देखा जायगा।

शीतलसेनी—कभी नहीं, विना अपना हिस्सा प्राप्त किए यहॉ से न टलूँगी। कब तक तुम्हारा अन्याय सहन होगा ?

विक्रम—मैंने कौन-सा अन्याय किया है ? [आसन से उठना।]

शीतलसेनी—हमारे धन से अपने विलास के सामान जुटाते हो !

विक्रम—तू किसके सामने बोल रही है ?

शीतलसेनी—एक क्रूर के समीप, एक डाकू के सामने।

विक्रम—सावधान ! अपने वंश को याद कर। नीच दासी ! तेरा ऐसा साहस ?

शीतलसेनी—मै तेरे चाचा की स्त्री मा के समान हूँ, नीच दासी ! इन अपमान-जनक शब्दो को याद रखना, विक्रम ! तूने नागिन की पूँछ दबाई है।

विक्रम—मै उसका सिर भी कुचल दूँगा।

शीतलसेनी—मै उससे पहले ही तेरा मुकुट चूर्ण कर दूँगी, तेरा सिहासन उलट दूँगी, तुझे समूल नष्ट कर दूँगी।

[पैर पटककर सक्रोध प्रस्थान। दूसरी ओर से शांत भाव से धीरे-धीरे पन्ना का प्रवेश।]

पन्ना—कौन ? भयंकर अभिशाप की मूर्ति ! तू समूल नष्ट करेगी, तो मुझे अपनी बलि देकर भी रक्षा करने की शक्ति प्राप्त हो। संग्रामसिंह के वंश के लिये दावानल ! मैं उसको अपने रक्त से बुझा दूँगी।

विक्रम—कौन, मा ! धाई-मा ! पन्ना !

हाँ, महाराना !

विक्रम—मा ! शरण दो, आज सारा मेवाड़ मेरा शत्रु हो गया। [विनत होना]

[बनवीर का चिंतित होकर प्रवेश।]

बनवीर—सर्वनाश भाई, सर्वनाश !

विक्रम—क्या हुआ बनवीर !

बनवीर—सरदार सब विद्रोही हो गए। वे तुम्हें आजन्म कारागार में बंदी कर मुझे सिंहासन में बिठाना चाहते हैं।

विक्रम—और तुम ?

बनवीर—तुम्हें हानि पहुँचाकर इंद्रासन भी न लूँगा।

विक्रम—तुम मेरे सच्चे मित्र हो। तुमने अपने प्राणों की चिंता न कर जयसिंह के वार को रोका, और मेरी रक्षा की। प्रतिज्ञा करो, बनवीर !

बनवीर—भगवान एकलिंग की शपथ, विश्वासघात न करूँगा।

[तलवार ऊँची कर प्रतिज्ञा करता है।
विक्रम बनवीर के कंधे पर हाथ रखता है।
पन्ना आश्चर्य नाट्य करती है। स्थिर दृश्य।]

अगले महल का परदा गिरता है।

द्वितीय दृश्य

बनवीर का महल

[शीतलसेनी गाती हुई आती है।]

काफ़ी—झपताल

अपमान की आग,

मेरे मन मे जाग री, जाग।

(अंतरा)

हो भस्म उसमें रिपु-शक्ति सारी,

हे भाव भय के, भाग रे भाग,

जागे मेरे भाग।

शीतलसेनी—यह राजमाता बनने की इच्छा न-जाने कब से बलवती होती जा रही है। समय इसके अनुकूल ही चल रहा है। विक्रम ने मेरा अपमान किया, वही मेरे मान का कारण होगा। सरदारों और प्रजा का आग्रह है, विक्रम के स्थान में बनवीर मेवाड़ के महाराना हो। मै भी राजमाता बनूँगी।

[रणजीत का प्रवेश।]

रणजीत—और मैं?

शीतलसेनी—तुमने सुन लिया? बड़े चतुर हो। हाँ, हाँ, तुम भी प्रधान मंत्री बनोगे। तुम उसके लिये प्रयत्न कर रहे हो?

रणजीत—हाँ, बराबर सफलता के साथ। विक्रम के पीछे मैंने ही प्रजा मे राजद्रोह की आग फैलाई है। उसके सामने मै उसका मित्र हूँ। प्रजा का दुख दूर करने के लिये उसने जब चिंता की, तभी मैंने उसके हाथों मे सुधा से परिपूर्ण पात्र रख दिया।

शीतलसेनी—तुम्हारी सहायता से निस्संदेह मेरा काम पूरा होगा।

रणजीत—पर मुझे भय है, तुम उस समय कहीं मुझ ही न भूल जाओ।

शीतलसेनी—चिंता न करो, रणजीत! मैंने तुम्हारे आग्रह के अनुसार यह लिखत कर दी है। [लिखत देती है।]

रणजीत—पढ़ूँ तो। [लिखत लेकर पढ़ता है।] "यदि सरदार रणजीत रानी शीतलसेनी को राजमाता बनने मे सहायता दें, तो उन्हे मेवाड़ाधिपति बनवीर का प्रधान मंत्री-पद प्राप्त होगा। हस्ताक्षर—शीतलसेनी।" [लिखत सावधानी से मोड़कर अंदर की जेब में रखता है।]

शीतलसेनी—[चिंतित होकर।] किंतु जिसकी आशंका ही नहीं थी, ऐसा एक विघ्न उपस्थित हो गया है।

रणजीत—वह कौन-सा?

शीतलसेनी—बनवीर विक्रम का मित्र है। वह उसे गद्दी से उतारकर स्वयं राजा बनना किसी प्रकार स्वीकार नहीं करता।

रणजीत—तो उन दोनो के बीच मे फूट की बेल बोना इस सेवक के बाएँ हाथ का खेल है।

शीतलसेनी—वह आज ही उगे, फूले और फले। यह कटार लेकर यहीं कहीं छिपे रहो। [कटार देती है।] बनवीर अभी इसी राह आनेवाला है। जब वह आवे, तो तुम उसके वध की—

रणजीत—[कटार भूमि पर गिराकर बीच में ही] यह क्या कहती हो माता!

शीतलसेनी—उसके वध का केवल प्रयत्न करना। उसे भूमि पर गिरा कटार भोंकने का केवल जाल-रचना।

रणजीत—अब समझा। [भूमि पर से कटार उठा लेता है।]

शीतलसेनी—उसी समय मैं तुम्हारे पीछे से आकर तुम्हारा कटार-युक्त हाथ थाम लूँगी, और तुम्हे बंदी कर लूँगी।

रणजीत—[चौंककर दूर भागता है। फिर कटार फेंक देता है, और दोनो कान पकड़ता है।] अरे बाप रे! बंदी कर मृत्यु-दंड दोगी। नहीं-नहीं, यह मुझसे न होगा माता!

शीतलसेनी—तो यह लिखत दे दो, और इसी के साथ राज-मंत्री बनने की लालसा का भी त्याग करो। लाओ। [लिखत लेने को हाथ बढ़ाती है।]

रणजीत—नहीं, इसे कदापि न दूँगा।

शीतलसेनी—यदि ऐसा ही है, तो इसको वास्तव जगत् में प्राप्त करने के लिये अग्नि और जल का सामना करने के लिये भी प्रस्तुत रहो।

रणजीत—कहो, कहो, माता ! वह कौन-सा ज्वालामुखी है, कौन-सा महासागर है, मैं उसमें कूद भी पड़ूँगा।

शीतलसेनी—लो, इससे अपना शरीर ढकना। [आवरण देती है।] तुम्हारी मुक्ति की उत्तरदाता मैं रहूँगी।

रणजीत—मैं अब बिल्कुल समझ गया। यह तो कुछ भी कठिन काम नहीं है। बड़ा ही सुगम उपाय है। देखना, रणजीत के हाथ का कौशल अब देखना।

शीतलसेनी—जाओ, उस कमरे में इसे ओढ़कर छिप जाओ। मैं यहाँ पर बनवीर को बातों में घेर लूँगी, कुछ देर बाद तुम्हें संकेत देकर चली जाऊँगी। उसी समय तुम बनवीर के ऊपर झपटकर उसे भूमिशायी करना। मैं तत्क्षण तुम्हारी मदद को दौड़ी आऊँगी। जल्दी करो, बनवीर आ रहा है।

रणजीत—जो आज्ञा। [जाता है।]

शीतलसेनी—हाय ! यह अपमान ! [बनवीर आकर सुनता है।] तूने ही मेरे केश खींचे, दासी और वेश्या कहा। हा ! भगवान् ! क्या मेरे बनवीर की भुजाओं में शक्ति नहीं है ?

बनवीर—माता का अपमान ! किसने किया ?

शीतलसेनी—तुम्हारी नसो मे उसका बदला लेने को रक्त है ?

बनवीर—क्यो नही ? [तलवार निकालता है ।]

शीतलसेनी—तुम पर माता का कुछ भी ऋण न रहे। जाओ, इसी प्रकार विक्रम की खोज करो। उसी ने तुम्हारी माता को वेश्या कहा है। उस अभिमान-भरे मस्तक को धड़ से अलग करो।

बनवीर—[तलवार फेककर] चुप रहो मा ! विक्रम भी कोई पराया है ? वह तो मेरे ही समान तुम्हारा पुत्र है। पुत्र कभी माता का अपमान नही करता, माता सदैव उसे क्षमा करती है।

शीतलसेनी—क्षमा ? तुम क्षमा करने को कहते हो, बनवीर ! हा ! भगवान् ! मै समझ लूँगी, मै वंध्या हूँ। मैंने गोद मे पुत्र नही, पिजरे मे पक्षी का पालन किया।

बनवीर—नही मा ! इस चिनगारी पर पवन नही, पानी डालो। चलो, विक्रम तुम्हारे चरणो पर गिरकर तुमसे क्षमा मॉग लेगा। यह तलवार मेवाड़ के शत्रुओ के लिये हो। [तलवार उठाकर रख लेता है।]

शीतलसेनी—इस समय विक्रम से बढ़कर और कौन मेवाड़ का शत्रु है ? तुम माता के निरादर को सह सकते हो, तुम्हे प्रजा की दीन दशा देखकर भी चिता न हुई ?

[जयसिंह के साथ चार सरदारों का आना।]

जयसिह—तुमने हमारे प्रस्ताव पर विचार किया, बनवीर !

तुम विक्रम के सिंहासन पर बैठने को प्रस्तुत हो या नहीं? हम इसी समय तुम्हारा उत्तर चाहते है।

बनवीर—राजमुकुट-हीन होकर विक्रम कहॉ रहेगे?

जयसिंह—दुर्ग के अँधेरे कारागार मे। जब तक जिएगा, अपने पाप का प्रायश्चित्त करेगा।

बनवीर—क्या तुम्हारे पिताजी की भी यही इच्छा है?

[कर्मचंद का प्रवेश।]

कर्मचंद—हॉ बेटा! इसी मेवाड़ की सेवा मे मेरा जन्म बीता है, मै इसकी अहित-चिंता नही कर सकता।

बनवीर—तो विक्रम के छोटे भाई उदय का राजतिलक कीजिए।

कर्मचंद—नही, अभी वह केवल बालक है। उसके बड़े होने तक तुम्ही मेवाड़ पर राज्य करो।

बनवीर—पर विक्रम को राज-सिंहासन खोकर कारागार मे रहने की क्या आवश्यकता है?

कर्मचंद—कारागार के कष्टो से कदाचित् वह फिर सुधरने की प्रतिज्ञा करे। सबके कल्याण के लिये राज्य के अधिकांश शुभचिंतको ने यही विचारा है। अच्छी बात है, तुम्हे हमारा प्रस्ताव स्वीकृत है। हम जाकर तुम्हारे राजतिलक की घोषणा करेंगे। [जाना चाहते है।]

बनवीर—किंतु—

शीतलसेनी—[बाधा देकर] चुप रहो पुत्र! मेवाड़ की भलाई में अब कोई किंतु नहीं।

[कर्मचंद, जयसिंह आदि सरदार जाते हैं ।]

बनवीर—बड़ी विकट समस्या है। मोहिनी से भरे हुए सुवर्ण के राजमुकुट !

शीतलसेनी—[एकाएक] हाँ, अभी आती हूँ।

[छिप हुए रणजीत को संकेत देकर चली जाती है । रणजीत का छद्मवेश में कटार लेकर प्रवेश और तत्क्षण बनवीर के पीछे से उसके ऊपर झपटना। ज्यों ही बनवीर को नीचे गिराकर कटार भोंकना चाहता है, त्यों ही शीतलसेनी 'आकर कटार छीन लेती है, और रणजीत को भागने का संकेत करती है। रणजीत भाग जाता है ।]

बनवीर—कौन ?

शीतलसेनी—नरपिशाच ! घातक ! भागा, भाग गया । पकड़ो-पकड़ो। [घातक के पीछे भागती है, पर बनवीर उसका हाथ खींच लेता है।]

बनवीर—तुमने रक्षा की, मा ! भागने दो उसे ।

शीतलसेनी—महान् आश्चर्य है, तुम्हारी हत्या करने यह कौन आया ? [कटार पर दृष्टि करती है।]

बनवीर—मेरा कोई भी शत्रु नहीं है।

[रणजीत का छद्मवेश त्यागकर प्रवेश ।]

रणजीत—विक्रम को छोड़कर। किस ध्यान मे हो बनवीर !

जब से विक्रम ने सुना है, सरदारगण तुम्हें उनके सिंहासन मे बिठाना चाहते है, वह तुम्हारा ही अस्तित्व मिटाने की चिंता मे है।

शीतलसेनी—निस्संदेह, यह घातक उसी ने भेजा है।

बनवीर—यह क्या देखता हूँ भगवान्! मैंने उस दिन राज-सभा में उसके प्राण बचाए थे।

शीतलसेनी—ये सब विचार छोड़ दो, संसार ऐसा ही है। उठो, मेवाड़ के सिंहासन के लिये प्रस्तुत होओ। इस पथ में जो बाधा हो, उसी का अंत करो।

बनवीर—ऐसा ही करूँगा, मा! उसने तुम्हारा अपमान किया, वृद्ध पिता-तुल्य सरदार कर्मचंदजी का तिरस्कार किया, प्रजा को असंख्य कष्ट दिए, आज वही मेरे प्राणो का भूखा है। तुम्हारा बदला, सरदारो का अनुरोध, प्रजा का हाहाकार और अपने प्राणो का मोह—मै इन सबके लिये मेवाड़ के सिंहासन मे बैठूँगा। बताओ मा! राजमुकुट कहाँ है?

[बनवीर, उसके पीछे शीतलसेनी और रणजीत का प्रस्थान।]

परदा उठता है।

तृतीय दृश्य

उपवन में चित्तौड़ेश्वरी का मंदिर

[पन्ना हाथ जोड़कर प्रार्थना कर रही है।]

पीलू—तीन ताल

पन्ना—तेरी प्रतिमा मन-मंदिर में,
तेरा स्तुति-गीत अधर में है;
तेरा ही ध्यान विचारों में,
तेरी माला युग कर में है।

[बाईं ओर उदय का प्रवेश।]

उदय—तू आदि देव परमेश्वर है,

[दाहनी ओर चंदन का प्रवेश।]

चंदन—तू अंतक रुद्र भयंकर है।

पन्ना—तू तारों में, तू पुष्पों में,
तू प्रतिबिंबित सागर में है।

तीनों—तेरा ही ध्यान विचारों में,
तेरी माला युग कर में है।

[उदय-चंदन का जाना।]

पन्ना—तेरी प्रतिमा मन-मंदिर में,
तेरा स्तुति-गीत अधर में है।

[उदय का प्रवेश ।]

उदय—तेरी महिमा मग-मग पर है,

[चंदन का प्रवेश ।]

चंदन—तेरी गरिमा पग-पग पर है।

पन्ना—तू ही रजनी में लोप हुआ,
तू प्रकट दिवाकर-कर में है।

तीनो—तेरा ही ध्यान विचारों में,
तेरी माला युग कर में है।

पन्ना—तू तेज और तू ही तम है,
तू विषम और तू ही सम है।

उदय—तू रास-चक्र मे कहीं श्याम,

चंदन—तू काली कहीं समर मे है।

उदय और चंदन—तेरा ही ध्यान विचारो में,
तेरी माला युग कर में है।

तीनो—तेरी प्रतिमा मन-मंदिर में,
तेरा स्तुति-गीत अधर मे है।
तेरा ही ध्यान विचारो में,
तेरी माला युग कर में है।

[एक ओर उदय, दूसरी ओर चंदन को लेकर पन्ना आगे बढती है ।]

पन्ना—तुम एक पेड़ मे फैलनेवाली दो शाखाएँ हो, एक शाखा मे फूलनेवाले दो फूल हो, एक फूल में फलनेवाले दो फल हो।

उदय—उन दोनो की जड़ मे तुम एक ही हो मा !

पन्ना—मेरी एक ही इच्छा है, मेवाड़ का मंगल हो। मैंने इसके लिये मा चित्तौड़ेश्वरी के मंदिर मे बार-बार विनती की है। संग्रामसिंह का वंश गौरव को प्राप्त हो, मेवाड़ की प्रजा सुखी रहे।

चंदन—महाराना संग्रामसिह, यह उदय के पिता का नाम है। तुम बार-बार यह नाम सुनाती हो, तुमने एक बार भी मेरे पिता का वर्णन भली भाँति नहीं किया। इतना तुमने अवश्य ही कहा है कि मेरे पिता संग्रामसिह की सेना मे सैनिक थे।

पन्ना—हाँ, इसके बाद कनवाहा के युद्ध मे अपना दाहना हाथ भेट चढ़ा सेना से अलग हो गए। जब गुजरात के सुल्तान ने चित्तौड़ का ध्वंस किया, तो उसने हमारे जीवन के अतिरिक्त हमारे लिये कुछ भी न छोड़ा। तब तुम बहुत ही छोटे थे।

चंदन—यह सब मैं जानता हूँ, इसके अतिरिक्त भी कुछ जानना चाहता हूँ। मेरे पिता कहाँ हैं, मा! जब मैं छोटा था, तो तुम कहती थी, धन कमाने के लिये विदेश गए हैं। वह कब लौटेगे ?

पन्ना—मै क्या उत्तर दूँ पुत्र !

उदय—अब तुम कभी नहीं कहतीं कि वह विदेश गए हैं। क्या उन्होने तुमसे जाते समय कुछ भी नहीं कहा ?

पन्ना—नहीं, वह स्वामी के विछोह की रात, इतने दिनों का अंतर होने पर, अब भी भयंकर ज्ञात होती है।

उदय—वह क्यों चल दिए होंगे ?

पन्ना—दुख और दरिद्रता से विकल होने के सिवा और क्या हो सकता है ?

उदय—तुम्हारी और चदन, दोनो की ममता को बिल्कुल भूलकर ?

पन्ना—हॉ बेटा, हमारी ही चिता नही, बल्कि उन्होने उस समय ईश्वर का विश्वास भी छोड़ दिया था। [गले से एक तावीज निकालकर] यह तावीज़ मैंने हर घड़ी उनके गले मे देखा था। जिस रात को वह चुपचाप घर छोड़कर चल दिए, उसके प्रभात मे यह मुझे द्वार के पास पड़ी मिली। उनके लौट आने की आशा मे मै आज तक इसे पहने रही। अब इसे तुम्हीं पहना करो चंदन ! यह तुम्हारी रक्षा करे । [चंदन के गले में वह तावीज़ पहना देती है।]

चंदन—मैं भी इसकी रक्षा करूंगा।

उदय—तुम फिर हमारे यहाँ कैसे आईं मा !

पन्ना—जब मैंने अपने को असहाय पाया, तो मैं तुम्हारे पिताजी के दरबार मे गई। उन्होने दया कर मुझे तुम्हारे पालन-पोषण का भार सौपा।

उदय—तुम्हें कभी उनकी याद आती है या नहीं ?

पन्ना—याद ? कैसे कहूँ, नही आती ? पर जब मैं तुम दोनो

के अधरों पर हँसी की रेखा देखती हूँ, तो अश्रु-बिंदु सूख जाते हैं।

चंदन—मा! क्या तुमने पिताजी के कभी कोई समाचार नहीं सुने ?

पन्ना—विश्वास करने योग्य कुछ भी नहीं। कोई कहता है, वह डाकू हो गए, कोई कहता है, बैरागी हो गए, और कोई कहता है—[कंठावरोध]

चंदन—नहीं मा! इस तीसरी बात का उच्चारण भी न करो। यह हो नहीं सकता, झूठ है। मैं अपने मन में किसी दूर देश से पिताजी को पुकारता हुआ पाता हूँ। वह कहते हैं—"चंदन! यहाँ आओ!" मैं अवश्य ही उनके गले लगूँगा। किंतु कब? यह नहीं जानता।

उदय—धाई मा! यह इतने दिनों से क्या हो रहा है? कुछ भी समझ में नहीं आता। महाराना और सरदारों में क्यों इतना विद्रोह फैल गया है? राजसभा का कार्य नियमित नहीं है। प्रजा दुखी क्यों है?

पन्ना—इन सबका कारण एक ही वस्तु है, वह क्या है? ठीक-ठीक कुछ भी समझ में नहीं आता।

उदय—[नेपथ्य को देखकर] महाराना इधर ही आते हैं। इन्हीं से पूछना चाहिए। चित्तौड़ेश्वर की जय हो!

[महाराना विक्रम का प्रवेश।]

विक्रम—मेरे कारण न हो सकेगी, उदय! मेरे कंधों पर

मुझे मेरा सिर ही भारी प्रतीत होता है। उस सिर मे अब चित्तौड़ के मुकुट को धारण करने की योग्यता नहीं है।

उदय—आप यह क्या कह रहे है? महाराना!

विक्रम—मैं सच ही कह रहा हूँ, उदय! विक्रम के सुख के लिये हो, न हो; पर इसमे चित्तौड़ का मंगल अवश्य ही है।

पन्ना—महाराना, आज क्यो इतने व्यग्र हैं?

विक्रम—तुम कुछ भी चिता न करो पन्ना! सरदारो ने मुझे सिहासन से हटाना विचारा है। मै उनसे पहले ही यह चित्तौड़ का राजमुकुट तुम्हे सौपने आया हूँ। [मुकुट हाथ में लेकर] उदय! जब तक तुम्हारा नन्हा मस्तक इसके उपयुक्त न हो जाय, तब तक इस मुकुट की रक्षा भी तुम्ही करोगी पन्ना! [मुकुट पन्ना को देना चाहता है। क्रोधित बनवीर का प्रवेश।] आओ भाई बनवीर! इस अवसर पर तुम्हारा रहना भी आवश्यक था। किंतु यह क्या? तुम चुप हो? तुम्हारी आँखो मे क्रोध की लालिमा छाई है। क्या तुम भी मुझसे रूठ गए?

बनवीर—चुप रहो विक्रम! तुम्हारी मित्रता का भेद छिपा न रह सका। तुम नहीं जानते, मै क्यो आया हूँ?

विक्रम—निश्चय ही मुझे कोई विशेष सम्मति देने आए हो, जिससे मेरे राज्य की विद्रोहाग्नि शांत हो।

बनवीर—नहीं, नहीं, अपनी प्राणवायु देकर भी उसे गगनचुंबी करने को। मै शाति के लिये नहीं, युद्ध करने आया हूँ।

विक्रम—तुम युद्ध करने आए हो ? क्या हम दोनो का एक ही शत्रु नही है ?

बनवीर—नहीं, हम दोनो एक दूसरे के शत्रु है।

विक्रम—तुम्हारे शब्द भय से भरे हुए है। तुम्हारे इस रोप का आधार ? इस विषम भाव-परिवर्तन का कारण ? इतने अविलंब मे ?

बनवीर—अपने हृदय पर हाथ रखकर पूछो, विक्रम ! यदि मैं कहूँ कि मै तुम्हारा वध करने आया हूँ, तो न्याय के कानो को यह कुछ भी बेसुरा न प्रतीत होगा।

पन्ना—बड़ी देर से यह क्या सुन रही हूँ, बनवीर ! तुम्हारा हिंसा-भाव आज क्यो इतना जागरित है ?

बनवीर—तुम उत्तर नही देते विक्रम ! मैं ही तुम्हारे पथ का प्रबल काँटा हूँ, क्यो ? तुमने घातक भेजा, पर वह मुझे न मार सका।

विक्रम—तुम्हारी हत्या को घातक भेजा ? यह कैसा अद्‌भुत सत्य है ? इसकी साक्षी ?—

[रणजीत का प्रवेश।]

रणजीत—मैं दूँगा। मैने अपनी आँखो से घातक को असफल होकर भागते देखा।

विक्रम—घातक असफल हुआ, यह हर्ष की बात है। पर उसे मैने भेजा, यह कौन झूठा कहता है ?

रणजीत—यह अनुमान और तर्क कहता है। सभी बातें कोई कहाँ तक देख सकता है ?

विक्रम—रणजीत ! तुम भी मेरी सहायता करते नहीं दिखाई देते ? इससे पहले तुम सदैव मेरे ही गीत गाते थे। कभी-कभी ऐसा जान पड़ता है, तुम दोनो पूर्व-मंत्रणा करके परिहास कर रहे हो। अब बहुत हो चुका, यह पीड़ा असह्य प्रतीत होती है।

रणजीत—जीवन और मरण के प्रश्नो को लेकर कौन परिहास करता है ?

बनवीर—तुम्हारा वार चूक जाने पर मुझे अपनी ढाल खोजनी चाहिए या तलवार ? क्यो विक्रम ! तुम क्या उत्तर देते हो ?

उदय—मा ! यह क्या करना चाहते है ? चित्तौड़ के महाराना को क्या ऐसे ही संबोधित किया जाता है ?

विक्रम—कुछ समझ में नहीं आता, यह किसका षड्यंत्र है ? तुम्हें मुझसे इस प्रकार किसने विमुख कर दिया ? मैं इस जीवन का मोह छोड़ दूँगा, बनवीर ! यदि तुम अपनी हत्या के बदले मेरा वध करना चाहते हो, तो भूलते हो। सत्य पृथ्वी के टुकड़े-टुकड़े कर प्रकट होगा। हाँ, यदि यह चित्तौड़ के मुकुट के लिये है, तो इतना पश्चात्ताप न होगा। लो, वह यही है। [मुकुट देता है।]

बनवीर—[मुकुट लेकर] लाओ, लाओ, मैं इसकी रक्षा करने को बाध्य हूँ। सैनिको ! विक्रम को बंदी करो।

[चार सैनिकों का प्रवेश।]

पन्ना—[कमर से कटार खींचकर] यह क्या बनवीर! सावधान! मैं धाई ही नहीं, राजपूतनी भी हूँ। मेरे जीवित रहते कोई महाराना को बंदी नहीं कर सकता। [विक्रम की रक्षा करती है।]* *

बनवीर—सैनिको! देखते क्या हो, बंदी करो। महाराना मै हूँ।

पन्ना—[सैनिकों को लक्ष्य कर] सावधान! आगे पैर बढ़ाया नहीं कि टुकड़े-टुकड़े कर डालूँगी।

[चार सरदारों के साथ कर्मचंद का आना।]

कर्मचंद—[पन्ना के हाथ से कटार छीन लेना, पन्ना उनको देख आदर प्रकट कर हट जाती है।] शांत होओ, पन्ना! प्रजा की यही इच्छा है, परमेश्वर का यही आदेश है। अपने स्वार्थ को भूल जाओ। बंदी करो सैनिकगण!

विक्रम—हाँ-हाँ, बंदी करो।

[विक्रम बंदी होता है।]

कर्मचंद—उदय, इधर आओ।

बनवीर—लो, यह राजमुकुट तुम्हारा है। तुम्हारे बड़े होने तक इसकी रक्षा मै करूँगा। [उदय के मस्तक पर राजमुकुट रख देता है।]

उदय—[मुकुट निकाल भूमि पर रख देता है।] नहीं-नहीं, यह इस प्रकार भारी ज्ञात होता है, मैं इसको सह न सकूँगा।

[शीतलसेनी का प्रवेश।]

शीतलसेनी—कौन ? महाराना विक्रमसिंह ! क्या यह नारी के अपमान का बदला है ?

[स्थिर नाट्य]

अगले महल का परदा गिरता है।

चतुर्थ दृश्य

बनवीर का महल

[बनवीर हाथों में राजमुकुट लेकर आता है।]

बनवीर—अहो! स्वर्ण-निर्मित, हीरक-खचित राजमुकुट! तुम्हारा आकर्षण बड़ा प्रबल है। तुम्हारे स्पर्श ने मुझे भी न-जाने क्या कर दिया? तुमने समझाया, संसार में मैत्री कुछ भी नहीं, मित्र कोई भी नहीं। तुम जो कुछ और समझाओगे, मैं उसे समझने को भी प्रस्तुत हूँ। [मुकुट मस्तक में धारण करता है।] राजधानी का प्रत्येक मनुष्य मेरे विचार पर बोलता है, मेरे संकेत पर नमता है। मैं बहुत ऊँचा चढ़ गया हूँ।

[शीतलसेनी का प्रवेश।]

शीतलसेनी—नहीं, अभी तीन सीढ़ियाँ चढ़ने को और शेष है।

बनवीर—वे कौन-सी है, मा!

शीतलसेनी—समय आने पर तुम्हें स्वयं ज्ञात हो। तुम्हारे मित्र कम हो गए है, बनवीर! तुमने शत्रुओं को कम करने पर विचार नहीं किया?

बनवीर—जिसे सरदारों के अनुरोध से बंदी किया है उसी का तुम्हारे अनुरोध से, तुम कहती हो—

शीतलसेनी—हाँ-हाँ, वध करो। परमेश्वर के अतिरिक्त तुम्हारा विचार करनेवाला और कोई नहीं है। उसको उत्तर मेरा अपमान देगा। उस अग्नि से मै प्रतिपल दग्ध हो रही हूँ, बनवीर! तुम उस पीड़ा का अनुभव नहीं कर पाते।

बनवीर—विक्रम का वध! तुम न-जाने कितने दिनो से यही कह रही हो। क्या हम दोनो एक साथ ही नही बढ़े है? तुमने विक्रम को भी दूध पिलाया है, मा! वह मेरे ताऊजी का लड़का है। उसकी हत्या न हो सकेगी।

शीतलसेनी—तो फिर अपने प्राण देने को तत्पर रहो।

बनवीर—मुझे किसी का भय नही। विक्रम को सरदारो ने बंदी किया है, यह राजमुकुट मेरे पास धरोहर है। मेरा शत्रु कौन है, मा?

शीतलसेनी—क्या दूसरी बार भी मुझे ही बताना पड़ेगा?

बनवीर—[कुछ याद कर] तुमने एक बार मुझे जन्म दिया, दूसरी बार विक्रम के भेजे हुए घातक से बचाया। वह भी याद आया।

शीतलसेनी—वही अब फिर न-जाने किस समय तुम्हारे वध की चेष्टा करे। मुझे यही चिंता नोच रही है। कौरव क्या पांडवो के भाई न थे? न्याय और नाते का कुछ भी संबंध नही। विक्रम का वध करो, और रक्त सूखने के पहले ही उसी कटार से उदय—

बनवीर—[बाधा देकर] चुपो-चुपो, यह क्या कहती हो? उदय की मा मर गई, उसके बाद कई दिन तक तुमने उसे अपनी

छाती से लगाया। राजनीति के परदे मे विक्रम को दंड दिया भी जाय, तो इस अबोध बालक उदय का क्या अपराध है?

शीतलसेनी—इसके विचार के लिये अभी समय है। तुमने नहीं सुना, विक्रम सरदारो से गुप्त संधि करनेवाला है।

बनवीर—है, गुप्त संधि ?

शीतलसेनी—हॉ, मैंने इसकी खोज के लिये रणजीत को भेजा है। यदि विक्रम कारागार से मुक्त हो जाय, तो ?

बनवीर—विक्रम को मुक्त कर कौन सकता है? सरदार होते कौन है? महाराना मै हूँ। कटार लाओ, मा!

शीतलसेनी—लो। [कटार देना चाहती है]

बनवीर—कुछ देर ठहरो। मै देख लूँ, बाहर अधकार कितना है। मैं उसमे छिप सकूँगा या नहीं।

[बनवीर का जाना। दूसरी ओर से रणजीत का घबराए हुए आना।]

शीतलसेनी—क्यों, क्या समाचार हैं?

रणजीत—सरदार कर्मचंद कहते है, यदि विक्रम न्याय-पूर्वक राज्य करने की प्रतिज्ञा करे, तो उसे फिर मुक्त कर सिहासन पर बिठा दिया जाय।

शीतलसेनी—जाओ, जाओ रणजीत! तुम अभी जाकर विक्रम की मुक्ति मे यथाशक्ति बाधा पहुँचाओ। याद रक्खो, कर्मचंद को कुछ भी अधिकार नहीं है। मेवाड़ का महाराना बनवीर है।

रणजीत—और मेवाड़ का प्रधान मंत्री ?

शीतलसेनी—तुम्हीं होओ, किंतु तब तक नहीं, जब तक बनवीर का पथ काँटों से भरा है। जाओ, विक्रम को मुक्त न होने दो, शीघ्रता करो।

रणजीत—जो आज्ञा।

[रणजीत का जाना, नेपथ्य को देखते हुए बनवीर का धीरे-धीरे प्रवेश।]

बनवीर—अंधकार, सर्वत्र ही अंधकार है। दिन का साक्षी सूर्य डूब गया है, चंद्रमा कृष्णपक्ष की ओट मे है, नीहारिका-नक्षत्र सभी बादलो मे छिप गए है। मनुष्य दीपक भी बुझा देने को तैयार हैं। इस तमोमयी रात में तुम मेरे हाथ मे कटार देकर मेरे शत्रु के घर की राह दिखाती हो, मा !

शीतलसेनी—हाँ, जिस सिंह को बंदी कर छोड़ा है, उसका पिंजरे ही में वध करो।

बनवीर—इसी भीषण वध, अनंत अत्याचार और अविराम हाहाकार ही पर राजसिंहासन ठहरा हुआ है। मै भी उसी पर बैठना चाहता हूँ। कटार लाओ, मा ! [कटार लेकर घुटने टेकता है।] आशीर्वाद दो, यदि यह संसार का सबसे बड़ा पाप भी है, तो इसमें एक पुण्य है, वह पुण्य है तुम्हारी आज्ञा का पालन।

शीतलसेनी—[आशीर्वाद देकर] शत्रु का वध कर अभय होओ।

[दोनो का एक दूसरी ओर को जाना।]

परदा बदलता है।

पंचम दृश्य

अँधेरा कारागार

[शृंखलाओं में जकडा विक्रम]

विक्रम—मै ही विक्रम हूँ। प्रहरी ! नहीं सुनता ? कल तक तू मेरे सामने हाथ बाँधे खड़ा रहता था, आज तलवार खींचे खड़ा है। मैं अपनी वासनाओं का क्रीतदास था, तो क्यो समस्त चित्तौड़ का स्वामी हुआ ? प्रहरी ! नहीं सुनता। जा, मेरे लिये एक प्याला मद ले आ। उसमे कालसर्प का विष घोल ला कि वही अंतिम हो। जीवन-भर इस मद से युद्ध करता चला आ रहा हूँ। आज इस पराजय की रात मे मेरा शत्रु मेरा अंत करे। यह कारागार ही युद्ध-क्षेत्र होगा। मै हँसते-हँसते विष-पान करूँगा, क्या इससे वीर-गति न मिलेगी ? राजकुल ! तुम लालसा के लिये नहीं, मैं भिखारी के घर जन्म लेता। [पन्ना की भोजन का थाली और कपडे लेकर प्रवेश।] कौन ?

पन्ना—मै हूँ महाराना ! धाई पन्ना।

विक्रम—क्यो, किसलिये आई हो ?

पन्ना—नमक अदा करने।

विक्रम—किस तरह ?

पन्ना—[थाली भूमि पर रखकर] यह भोजन करो, और ये कपड़े पहन, इस थाली को उठाकर कारागार से मुक्ति पाओ। यह अँगूठी प्रहरी को दिखाकर दुर्ग का परित्याग करो। [अँगूठी देना चाहती है।]

विक्रम—[अँगूठी लेने को हाथ बढ़ाता है।] और तुम ?

पन्ना—मैं यहीं रहूँगी।

[विक्रम हाथ खींच लेता है।]

विक्रम—बनवीर तुम्हारा वध कर डालेगा, धाई-मा !

पन्ना—यह मैं अच्छी तरह समझती हूँ, महाराना ! राजपूतनी मरने से नहीं डरती।

विक्रम—तब उदय और चंदन की रक्षा कौन करेगा ? तथा मै ही मुक्ति-लाभ कर कहाँ जाऊँगा ?

पन्ना—उदय और चंदन को अपने साथ लेकर मेवाड़ के बाहर जहाँ भी जाओगे, निरापद रहोगे। संग्रामसिंह का नाम सैनिको को एकत्र कर देगा। तुम्हारी इन नसों मे उसी वीर-केसरी की बिजली है। केवल तुमने उसे भुला दिया है। वह जिस दिन स्मरण हो जायगा, उस दिन एक नहीं, शत-सहस्र बनवीर तुम्हारे सम्मुख नहीं ठहर सकते। लो, शीघ्रता से भोजन करो, और मुक्ति पाओ।

विक्रम—नहीं मा ! ऐसा न होगा। मैंने अवश्य ही अपराध किए हैं, मुझे क्षण-भर भी दंड और विचारक का ध्यान नहीं हुआ। इस अँधेरे कारागार मे मुझे जकड़ा रहने दो, यह मुझे

शांतिमय प्रतीत होता है। पन्ना! मैं बंदी हूँ, तो क्या हुआ? वीर-शिरोमणि संग्रामसिंह का रक्त मेरी नसों में है। मैं मर्द हूँ, स्त्री का वेश पहनाकर तुम मुझे कारागार से बाहर भेजती हो। नहीं मा! मैं इस वेश से स्वर्ग के अंदर भी न जाऊँगा।

[हाथ में दीपक लिए उदय का कर्मचंद के साथ प्रवेश।]

उदय—[दीपक रखकर] उठो भाई! पितृ-तुल्य सरदार कर्म-चंद के समीप प्रतिज्ञा करो। तुम्हें उपदेश लेने का अवसर मिल गया। यह तुम्हें मुक्त करने आए हैं। तुम भविष्य में सत्पथ ग्रहण करोगे?

विक्रम—मैंने अभिमान के मद से भरी सभा में इनके ऊपर तलवार उठाई थी। यह मुझे क्षमा करेंगे, तो मैं भी भगवान् एकलिंग को साक्षी कर प्रतिज्ञा करता हूँ कि प्रजा को संतानवत् पालूँगा।

कर्मचंद—रवि-कुल-भूषण! यही तुम्हारे योग्य बात है। तुम फिर मुक्त होकर मेवाड़ के महाराना बनो।

पन्ना—महाराना विक्रम की जय!

कर्मचंद—प्रहरी! महाराना के बंधन खोल दो।

[प्रहरी का आकर ज्यों ही महाराना के बंधन खोलना, त्यों ही रणजीत का प्रवेश।]

रणजीत—प्रहरी, सावधान! यह किसकी आज्ञा है? [प्रहरी को हाथ खींचकर हटा देना।] मंत्री महोदय! जब समस्त

सरदारो की मंत्रणा से इन्हे बंदी किया गया है, तो केवल एक की इच्छा और आज्ञा से इन्हे मुक्त करना उचित नही। आप हमारे पूज्य हैं, हमसे अधिक राज्य का अनुभव रखते है। जब बनवीर महाराना हो चुके है, तो क्या इस शीघ्रता से उनके हृदय पर आघात न होगा? कलह न बढ़े, चितौड़ मे शांति रहे।

कर्मचंद—ऐसा ही सही। चिंता न करो, महाराना! यह तुम्हारे प्रायश्चित्त की अंतिम रात है। कल प्रभात होते ही तुम मुक्त हो जाओगे।

उदय—आप महाराना को अभी मुक्त न करेगे?

कर्मचंद—धीरज रक्खो, बेटा! तुम अभी बालक हो। ये सब बातें नही समझ सकते। रात के बीतने में कितने युग समाप्त होगे?

पन्ना—तुमने आज कुछ भी नहीं खाया, कुछ खा लो।

विक्रम—नही मा! अभी कुछ भी इच्छा नही है। इसे यही छोड़ जाओ, जब इच्छा होगी, खा लूँगा। आप सभी लोग जायँ। रात बहुत बीत चली।

कर्मचंद—चलो पन्ना।

पन्ना—चलिए।

उदय—यह दीपक यहीं छोड़ जावेगे।



[विक्रम के सिवा सबका जाना।]

विक्रम—[दीपक के प्रति] सूर्य की अनुपस्थिति मे तुम्हीं

अँधेरे पथ पर प्रकाश डालते हो, दीपक ! तुम्हे प्रणाम है। यह कारागार मेरे पूर्वजो द्वारा निमित है। इसमे उन्होने कभी दीपक नहीं जलाया, मैने भी नही जलाया, फिर मेरे लिये ही यह क्यों जले ? कदाचित् इस अधकार मे ही मेरे पाप भस्म हो जायँ [दीपक का बुझा देता है।], और शायद मुझे कोई पथ दिखाई दे। मै मूक ही रहूँगा।

[बनवीर का सावधानी से कटार लेकर चारो ओर देखते हुए प्रवेश।]

बनवीर—[स्वगत] मूर्तिमान् पाप इसी अधकार मे रहता है। इसे मिटाना होगा। उसकी साँस का शब्द भी नही सुनाई पड़ता।

विक्रम—किसी के पैर की आहट है। इस अंधकार मे स्पष्ट नहीं दिखाई पड़ते, कौन हो तुम ?

बनवीर—यह मत पूछो।

विक्रम—मै कंठ-स्वर पहचान गया। तुम मेरे मित्र बनवीर हो।

बनवीर—तुम फिर-फिर मुझसे मित्रता चाहते हो, मै तुम्हारा सबसे बड़ा शत्रु हूँ। विक्रम ! तुम नहीं जानते, आज मेरी कटार तुम्हारा रक्त चाहती है।

विक्रम— मुझे इसका भय न हो। मेरे हाथ-पैर बँधे है। बड़ी सुगमता से तुम मुझे मार सकोगे। किंतु ठहरो, मुझे मेरा अपराध ज्ञात हो।

बनवीर—ठीक-ठीक कुछ भी नहीं जानता। जो कुछ जानता हूँ, उसके समझाने का समय नहीं है।

विक्रम—एक बात न सुनोगे ?

बनवीर—सुनूँगा, कहो।

विक्रम—मेरे बंधन खोल मुझे मुक्त कर दो बनवीर ! राज-मुकुट तुम्हारा ही रहे। मै तुम्हारे राज्य की सीमा से बाहर चला जाऊँगा। मै संन्यासी होकर तीर्थ-वास करूँगा।

बनवीर—न बोलो विक्रम, मै कुछ भी न सुनूँगा। तुम्हारे शब्द मोह उत्पन्न कर रहे है।

विक्रम—बनवीर ! बनवीर !

बनवीर—अब कुछ भी नहीं, यही अंत है !

[विक्रम की छाती में कटार भोंकता है।]

विक्रम—[पृथ्वी पर गिरते-गिरते] हा भगवान !

बनवीर—[विक्रम की छाती पर हाथ रखकर] विक्रम ! महाराना विक्रम !

[बनवीर विक्रम के हाथ की नाड़ियों पर उँगलियाँ रखता है, और उसको मृत जानकर, उसकी छाती से कटार खींचकर सावधानी से भाग जाता है।]

अगले रास्ते का परदा गिरता है।

षष्ठ दृश्य

अँधेरा पथ, आँधी और बिजली

[अकेले रणजीत का आना ।]

रणजीत—अवश्य ही राजमंत्री बनूँगा ! किंतु यदि शीतलसेनी ने आँखें बदल दीं, तो क्या होगा ? तो भी चिंता कैसी ? [भीतरी जेब से शीतलसेनी की लिखत निकालकर] क्या यह उसी के हस्ताक्षर नहीं हैं ? क्या इसमें उसके समस्त छल-प्रपंच को खोल देने की शक्ति नहीं है ? अहो ! शब्दों की कालिमे ! तुम मेरे लिये कितने मधुर अर्थ की छाया हो । इसी पर प्रधान मंत्री का आसन स्थिर होगा । [नेपथ्य में शीतलसेनी को देखकर लिखत जेब में रख लेता है ।] कौन ? वही है ।

[बिजली चमकती है । शीतलसेनी का आना ।]

शीतलसेनी—तुम यहीं पर हो ?

रणजीत—राजमाता ने मुझे यहाँ से हटने की आज्ञा ही कब दी थी ?

शीतलसेनी—रणजीत ! बनवीर के आने में बड़ी देर हो गई । विक्रम को देखकर उसके विचार तो नहीं बदल गए ?

रणजीत—नहीं मा, इसी पथ से तो अभी महाराना गए

हैं। उनके शरीर से चिनगारियाँ निकल रही थीं। उनकी चाल से जान पड़ता था, वह अवश्य ही शत्रु को समाप्त करेंगे।

[बनवीर का आना।]

बनवीर—कौन? मा! तुम यहाँ?

शीतलसेनी—हाँ, तुम्हारी सहायता को; क्या समाचार हैं?

बनवीर—तुम्हारे अपमान की अग्नि और मेरी कटार की प्यास, दोनो एक साथ ही बुझीं।

शीतलसेनी—विक्रम का वध?

बनवीर—हाँ, हो चुका। यह उसी के रक्त की रँगी कटार तुम्हारे चरणों की भेंट है। [कटार शीतलसेनी के चरणों के पास रखता है।]

शीतलसेनी—चिरजीवी होओ बनवीर! विक्रम मर चुका?

बनवीर—हाँ, ज्यों ही मैंने उसकी छाती मे कटार भोंकी, वह भूमि पर गिर पड़ा। मैंने उसकी साँस पर हाथ रखकर पुकारा—'विक्रम! महाराना विक्रम!' तुम्हे दासी कहनेवाले, मेरे रक्त के प्यासे ओष्ठाधर सदा के लिये बंद हो गए थे।

शीतलसेनी—तुम मातृ-ऋण से उऋण हुए, वत्स! किंतु जब तक उदय जीता है, विक्रम को मिटा न समझो। इसके रक्त मे सने हाथ उसके रक्त से धोओ। इसके पश्चात् केवल एक रक्तपात, और फिर सिंहासन में बनवीर और चित्तौर मे

शांति! शीघ्रता करो, यह रात बड़ी ही सुखद है। कल का सूर्य और तुम्हारा सौभाग्य, दोनो एक साथ ही उदय होंगे।

बनवीर—ठीक है, वह बड़ा होकर विक्रम का वध न भूल सकेगा। हो, उसका भी अंत हो।

[शीतलसेनी भूमि पर से कटार उठाकर बनवीर को देती है। फिर बिजली चमककर कड़कती है।]

शीतलसेनी—लो, जाओ, उदय इस महल मे सोता है।

बनवीर—मुझे भले प्रकार ज्ञात है।

[बनवीर का जाना।]

शीतलसेनी—मै बनवीर की दुर्बलता भी जानती हूँ। यदि उसने उदय को बालक समझकर कटार फेक दी, तो?—

रणजीत—आज्ञा दो देवी! हे प्रधान मंत्री के पद! तेरे लिये! कहो राजमाता! भूचाल मे चलूँ, या प्रलय मे नाचूँ?

शीतलसेनी—जाओ, बनवीर का अनुसरण करो। यदि वह उदय को न मार सके, तो तुम उसका वध कर डालना।

रणजीत—जो आज्ञा।

शीतलसेनी—याद रक्खो, उदय तुम्हारे मंत्री-पद का भी उतना ही भयंकर शत्रु होगा।

रणजीत—मै जानता हूँ इसे। यदि मैं उसका वध करूँगा, तो उसके रक्त की बूँदे तुम्हारी लिखत पर लाख-मुहरे होगी।

[रणजीत का तलवार खींचकर जाना।]

शीतलसेनी—जाओ, अगर तुम भी उस बालक को न मार सकोगे, तो मैं भी आती हूँ। मै उसका वध कर डालूँगी।

[शीतलसेनी भी कमर से कटार निकाल-
कर उसी ओर को चली जाती है।]

पट-परिवर्तन

सप्तम दृश्य

उदय का शयन-कक्ष

[पलंग पर उदय सोया है, सिरहाने दीपक है, पैर की ओर पन्ना भूमि पर बैठी है, उसकी गोद में चंदन सिर रक्खे सोया है। उदय पड़े-पड़े कुछ बेचैनी प्रकट करता है, पन्ना उसे चिंतित होकर लक्ष्य करती है, फिर चंदन की ओर देखकर उसे अपनी चादर का एक छोर ओढ़ा देती है।]

उदय—[उठकर] धाई-मा ! धाई-मा ! यदि सरदारों ने कल प्रभात-समय महाराना विक्रम को मुक्त न किया, तो क्या होगा ?

पन्ना—तुम अभी तक नहीं सोए। चिंता न करो, विक्रम कल अवश्य मुक्त होंगे। रात को इतनी देर तक जागते रहोगे, तो बीमार पड़ जाओगे।

उदय—तुम भी तो अभी तक जाग ही रही हो। तुमने चारण से एक गीत याद किया था। मैं उसी को सुनते-सुनते सो जाना चाहता हूँ।

पन्ना—वही गीत ? तुमने कई बार उसे सुना है ? [गाती है।]

सिंध काफ़ी—तीन ताल

हे मेवाड़ - प्रदेश ! धरा पर

तेरी स्तुति गाते हैं सुर - नर।

(१)

किया प्रकृति ने तुझको सुंदर,

उपजाए नाना गिरि - प्रांतर।

वन - उपवन, सरिता - सर - निर्झर,

नील तारिकामय नभ ऊपर।

(२)

कुंभ - खुमान - समान वीरवर,

बप्पा - साँगा - से नर - कुंजर।

चमकी वसुधा जिनको पाकर

जयति सूर्य - कुल, जयति तिमिरहर।

[उदय गीत सुनते-सुनते सो जाता है।]

(३)

अबलाओं ने भी असि लेकर

किए जहाँ पर युद्ध भयंकर।

जिनके अमर हुए हैं जौहर,

हो नति उन सतियों के पद पर।

(४)

तेरा यश फैला है घर - घर,

तेरा रण - तांडव प्रचंडतर

सुनकर अरि कंपित है थर - थर,

धरी आन तूने मर - मिटकर ।

पन्ना—[गीत समाप्त कर] सो गया क्या ? [अचानक नेपथ्य में क्रंदन-ध्वनि ।] यह रोने की ध्वनि क्या महलों से आती है ?

[टोकरी में जूठी पत्तल और झाड़ू लिए हुए बारी का आना ।]

बारी—पन्ना ! सर्वनाश हो गया ! [टोकरी भूमि पर रख देता है ।]

पन्ना—[चंदन का सिर धीरे से भूमि पर रख, घबराकर उठती है ।]—क्या हुआ ? क्या हुआ ? बारी !

बारी—बनवीर ने कारागार में महाराना विक्रम का वध कर डाला !

पन्ना—हा भगवान् ! [रोती है ।]

बारी—शोक को छोड़ो, रोने का समय नहीं है । वह अब उदय की हत्या करने यहाँ भी आवेगा ।

पन्ना—उदय की रक्षा का कोई उपाय ?

बारी—नहीं सूझता ।

पन्ना—कोई आशा ?

बारी—नहीं, घातक की दया पर छोड़ने के अतिरिक्त कुछ भी नहीं ।

पन्ना—वह पत्थर न पसीजेगा । तुम उदय को किसी प्रकार दुर्ग के बाहर ले चलो ।

बारी—उदय को न पाकर बनवीर तुम्हें मार डालेगा,

तुम्हारे बिना राजकुमार उदय कैसे जिएँगे ? उनकी रक्षा कौन करेगा ?

पन्ना—[भाव बदलकर] तब उदय को यहीं रहने दो। [उत्तेजित होकर] मैं उसकी राह रोक लूँगी, उसका हाथ झटक तलवार छीन लूँगी। तलवार के टुकड़े-टुकड़े कर फेंक दूँगी। सावित्री ने यम के पंजे से अपने स्वामी को छुड़ाया था, क्या मैं मनुष्य के हाथ से अपने स्वामी के पुत्र को न छुड़ा सकूँगी ? अवश्य छुड़ाऊँगी। बनवीर के हृदय में दया है, वह मेरा आदर करता है।

बारी—नहीं मा ! राजमुकुट पहनने के बाद वह बनवीर नहीं रहा।

पन्ना—हे भगवान ! क्या चित्तौड़ का वंश इस प्रकार समाप्त हो जायगा ? मेवाड़ के रक्षक देवताओ ! कोई उपाय बताओ। यह दीन अबला अपनी बलि देकर भी स्वामी की रक्षा चाहती है। [कुछ क्षण विचार-मग्न और निस्तब्ध रहकर क्रमशः स्वर ऊँचा करती है।] मेरे लाल के रक्त की प्यासी चित्तौड़-श्वरी ! तू यह पथ दिखाती है ? ऐसा ही हो। बारी ! तुम्हारी इस टोकरी में मैं उदय को सुला देती हूँ। तुम सावधानी से दुर्ग के बाहर भाग जाओ, और बेरिस-नदी के किनारे, श्मशान में, मेरी प्रतीक्षा करो।

बारी—यह तो फिर वही बात आई, बनवीर को क्या खबर दोगी ?

पन्ना—मैं उसकी आँखों मे धूल डाल दूँगी।

बारी—किस तरह ?

पन्ना—उदय की जगह किसी और को सुलाकर !

बारी—किसे सुलाकर ?

पन्ना—देख-देख, बारी ! मेरी छाती बनवीर से भी कठोर हो गई !

बारी—राक्षसी मा ! किसे सुला देगी ?

पन्ना—इसको, चंदन को, अपने लाल को।

बारी—मृत्यु की ममता-हीन गोद में ? स्वामी के ऋण का ऐसा प्रतिशोध ! तुम्हें प्रणाम है देवी ! तुम प्रातर्वंदनीय हो।

पन्ना—नहीं, डायन हूँ, राक्षसी हूँ। मैं क़साई के छुरे के नीचे अपने वत्स को रख दूँगी। बारी ! देर न करो, उदय को बचाना है, तो वहीं ले चलो।

[पन्ना टोकरी से जूठी पत्तलें निकाल उसमें एक कपड़ा बिछाती है। उसमें धीरे से उदय को लिटा देती है। ऊपर से एक हल्की चादर डाल उसके ऊपर फिर पत्तल रख देती है।]

बारी—बस, ले चलूँ ?

पन्ना—हाँ, शीघ्र, अति शीघ्र, मेरे विचार के बदलने और बनवीर के यहाँ आने से पहले ही।

बारी—परमेश्वर तुम्हारी रक्षा करे।

[पन्ना की मदद से बारी टोकरी को अपने सिर पर रख लेता है, और चला जाता है।]

पन्ना—[चदन के प्रति] सो रहा है अभागा पितृ-हीन बालक। कठोर भूमि, लाल ! अब यही तुम्हारी अंतिम गोद है। मै सर्पिणी हूँ, पर मैंने अपने बच्चे को ग्यारह साल पालकर खाया। चलो तात ! स्वामी के लिये प्राण देने मे जो स्वर्ग मिलता है, तुम्हारा आसन वहाँ ऊँचा हो, और पुत्र की हत्या करने के लिये जो रौरव हो, मेरा वहीं पतन हो। [सावधानी से भूमि से चंदन को उठाकर पलंग पर सुला देती है।] इस सेज पर तुम कभी नहीं सोए। अब न जागना, जागने से सारा भेद खुल जायगा। [ओढा देती है, फिर मुख खोलकर] यह स्वामी का ताबीज़ है, इससे तुम्हारी भी याद आवेगी। इसे निकाल लेती हूँ। [ताबीज़ निकालकर फिर मुख ढक देती है।] नहीं, अभी नहीं। अभी उसके आने मे देर है। [फिर मुख खोलकर] तब तक मै इसका मुख देखती ही रहूँगी। [चूमना चाहती है।] नहीं, कहीं जाग उठेगा। अब नहीं। कैसा सुंदर मुख है। देवताओ ! इसकी साक्षी देना। कुछ देर और, नहीं, नहीं। यह उसी की आहट है। [चंदन का मुख ढक देती है।]

[बनवीर का रक्त से रँगी कटार लेकर प्रवेश।]

बनवीर—पन्ना !

पन्ना—कौन ? बनवीर ! तुम्हारे हाथ मे कटार ? इसमे विक्रम का रक्त ?

बनवीर—हाँ, हाँ, बता, उदय कहाँ है ?

पन्ना—[बनवीर के चरणों में गिरकर] याद करो बनवीर ! तुम तो उदय के संरक्षक हो। पाप और पुण्य का विचार करो।

बनवीर—क्या शत्रु का वध क्षत्रिय का पुण्य नही है ? क्या माता की आज्ञा का पालन पुत्र का धर्म नही है ?

पन्ना—[उठकर बनवीर का सामना करती है।] मदोन्मत्त प्राणी ! तू पथ मे भ्रष्ट है। मै तेरे वध मे बाधा दूँगी।

बनवीर—पन्ना ! तू हट जा, नहीं तो मै तेरी भी समाप्ति कर दूँगा। [सेज की ओर देखकर] यही है। [सेज की ओर बढता है, पन्ना रोकती है। बनवीर पास आकर ज्यों ही वध के लिये कटार ऊँची करता है, त्यों ही—]

पन्ना—ठहर, ठहर, अंधे घातक ! अब भी देख, अपनी ही कटार के संकेत को समझ। यह ऊँची होकर कहती है, डर, [आकाश को उँगली से दिखाकर] उसको डर।

बनवीर—नही, वरन् यह कहती है, ऊपर चढ़ने का यही पथ है।

[बनवीर उदय के धोखे में चदन का वध करता है।]

पन्ना—हाय ! राक्षस ! [भूमि पर गिरकर मूर्च्छित हो जाती है।]





रणजीत—
महाराना
बनवीर
की
जय !

राजमुकुट
प्रथम अंक की
य व नि का
[पृष्ठ ५७]

Ganga Fine Art Press, Lucknow.

[बनवीर धीरे-धीरे चंदन की छाती के रक्त में रँगी कटार बाहर निकालता है। एक तरफ़ से शीतलसेनी और दूसरी ओर से रणजीत का आना।]

बनवीर—तुम यहीं आ पहुँची, मा! लो, तुम्हारी आज्ञा का पालन हो चुका। [शीतलसेनी को कटार देता है।]

शीतलसेनी—लाओ, लाओ, शत्रु के रक्त से तुम्हारा राज-तिलक करूँगी।

रणजीत—महाराना बनवीर की जय!

[बीच में बनवीर, एक ओर से शीतलसेनी कटार के रक्त से बनवीर का तिलक करती है, दूसरी ओर रणजीत अपनी तलवार से छाया करता है। पन्ना भूमि पर मूर्च्छित पड़ी है। स्तब्ध दृश्य।]

य व नि का

द्वितीय अंक

प्रथम दृश्य

वेरिस-नदी के किनारे श्मशान

[नदी-किनारे एक नाव बँधी है। बारी का आकर टोकरी ज़मीन पर रखना। उदय का जागना और उठकर चकित होना।]

उदय—सच-सच कहो बारी! तुम इस भयानक श्मशान मे मुझे क्यो ले आए? तुम इस टोकरी मे उठा लाए, यह और भी संदेह उत्पन्न करता है कि तुम्हारा अभिप्राय अच्छा नहीं है।

बारी—मैं कुछ नहीं जानता, धाई पन्ना ने ऐसी ही आज्ञा दी।

उदय—तुम झूठ तो नही कहते? तुम्हारी कोई कुटिल अभिसंधि तो नहीं है? तुम मेरे वस्त्राभूषण लेने के लिये इस एकांत मे मेरा वध तो न करोगे?

बारी—वध नही, पर वधिक के हाथ से बचाने लाया हूँ, राजकुमार!

उदय—[कंपित होकर] तुम किस भयानक घटना का आभास देते हो? मैं इस प्रभात मे महाराना विक्रम को मुक्त देखना चाहता था। तुमने यह क्या सुनाया?

बारी—पन्ना ने इसी श्मशान में मिलने को कहा है। वह आती ही होगी, उसके आने पर सब प्रकट हो जायगा।

उदय—तुम्हारी सच्चाई का विश्वास कर भी मेरा हृदय काँपता है, बारी! चलो, उस टीले पर बैठें, वहीं धाई मा की प्रतीक्षा करेंगे।

[दोनों का प्रस्थान। बाल-खुले बेसुध
पन्ना का पुत्र का शव लेकर गाते हुए आना।]

कालिंगड़ा—तीन ताल

तुम जागो लाल! निशा बीती।
तुम जीवन दे जीते रण को,
हौं बिख-घूँट पिए जीती।

[१]

सूखी सुर-सरिता ममता की,
छाती वज्र भई, गोद रीती।

[२]

सुत-संहारिणि डायन भइ मा,
या जग की अति विषम प्रतीती।

पन्ना—[गीत समाप्त कर] तू चुप क्यों है लाल! सूर्योदय हो गया, तू क्या सोता ही रहेगा? उठ-उठ, तू आज्ञाकारी है, आलसी भी नहीं। [कुछ सुधि आकर] मुझे क्या हो गया? मैं कहाँ आ गई? [इधर-उधर देखकर] हैं! श्मशान में? इसकी

छाती में रक्त है, इसे बनवीर ने मार डाला है। मेवाड़ के सिंहासन से तो इसका कुछ भी संबंध नहीं। फिर इसका अपराध? इसे बनवीर ने नहीं मारा। इसकी घातिनी मैं हूँ। [रोती है।]

[एक संन्यासी का आना।]

संन्यासी—इतने करुण स्वर से विलाप करनेवाली तुम कौन हो? जो आया है, वह अवश्य ही जायगा, क्या तुम इस अटल सत्य को नहीं जानती?

पन्ना—मैं जानती हूँ, महाराज! इन आँसुओं का भी तो कुछ उपयोग है।

संन्यासी—इनकी रक्षा कर। यदि सुख के समय इन्हें बहा सकेगी, तो दुख हास्य से खिल उठेगा।

पन्ना—तुम्हारा हृदय मरु-स्थल है संन्यासी! तुम माता की ममता नहीं जान सकते। देखो-देखो, क्या यह सुंदर मुख इतने शीघ्र मुरझाने के लिये था?

संन्यासी—मृत्यु के समीप सभी तर्क पराजित हैं। कोई भी नहीं बता सकता कि यह क्यों मरा? इसकी चिता चुन, मैं तेरी सहायता करूँगा। अपने मोह को इसके साथ ही जलाकर चली जा।

पन्ना—इसे जला दूँ? नहीं-नहीं, इसे जिलाऊँगी। मैं वन-पर्वतों से इसके लिये संजीवनी खोज लाऊँगी। मैं देवी-देवतों से इसके जीवन की भीख माँगूँगी। [सन्यासी को

सिर से पैर तक देखकर] तुम्हारा कैसा तेज-पूर्ण रूप है। तुम सिद्ध-महात्मा हो, मेरे पुत्र को जिला दो महाराज !

[चंदन को सन्यासी के चरणों पर रखती है।]

संन्यासी—यह परमेश्वर की इच्छा की पूर्ति है, इसका बाधक कोई सिद्ध नहीं हो सकता। जो जिएगा, वह अवश्य ही मरेगा, जो उदय होगा, वह अवश्य ही अस्त होगा।

पन्ना—[उदय शब्द को सुनकर राजकुमार उदय की स्मृति जागने से एकाएक भाव बदल देती है।] है ! उदय का अस्त ? नहीं-नहीं, महाराज, न होगा। यह बलि मैंने उसी के लिये दी है। मैं कहाँ भटक गई थी ?

संन्यासी—[कुछ न समझकर] तुम क्या कहती हो ?

पन्ना—कुछ भी नहीं, महाराज ! मैं मूक ही रहूँगी। मुझे आप ही आज्ञा दें, मैं अब इसे [चंदन को दिखाकर] छोड़कर उसी का पालन करूँगी।

संन्यासी—तो जाओ, सामने धूनी जल रही है, वहाँ से अग्नि ले आओ। मैं तब तक इसकी चिता चुनता हूँ।

[पन्ना का जाना। गत बजती है। सन्यासी का चिता चुनकर उस पर चदन को रखना। पन्ना का अग्नि लेकर प्रवेश। गत बजनी बंद होती है।]

पन्ना—मैं अग्नि ले आई हूँ।

सन्यासी—इसको चिता मे स्थापित कर, तेरा कल्याण हो, मै चला।

[फिर गत बजती है। पन्ना चिता में
अग्नि स्थापित करती है। संन्यासी जाता
है। चिता धधक उठती है।]

पन्ना—जाओ-जाओ लाल! देश और काल की परिधि से मुक्त उस सनातन लोक को प्रस्थान करो, जहाँ की माता संतान के प्राणो की प्यासी नहीं है। चंदन! नहीं-नहीं, उदय!

[बारी और उदय का आना।]

उदय—मा! मा! हम तुम्हे खोजते ही रह गए। बारी कहता है, बनवीर ने महाराना की हत्या कर दी! यह सच है मा?

पन्ना—हाँ, यह सच है।

उदय—चंदन कहाँ है?

पन्ना—चंदन?..[चिता की ओर देखकर फिर उदय को देखती है।] तू ही चंदन है। [फिर चिता की ओर देखती है।]

उदय—इन आग की लपटो मे तुम ध्यान-पूर्वक किसे देख रही हो मा? मुझसे बारी ने सब कुछ कह दिया। चलो, मैं उस पापी बनवीर को दंड दूँगा।

पन्ना—नहीं-नही, आज मेवाड़ का तिल-तिल तुम्हारा शत्रु है। हम देवलराज की शरण मे जावेंगे, उन पर तुम्हारे पिता ने कई उपकार किए हैं। वह अवश्य तुम्हारी रक्षा करेंगे।

लो, यह तावीज़ मैंने चंदन के गले से निकाल लिया था। इसे तुम पहने रहो। अपना असली परिचय किसी को न देना। पूछने पर अपना नाम चंदन और मुझे अपनी मा बताना।
[उदय के गले में तावीज़ पहना देती है।]

उदय—ऐसा ही करूँगा मा !

पन्ना—बारी, तुम्हारे उपकारों की ऋणी हूँ, यह भेद प्रकट न हो।

बारी—नहीं मा !

पन्ना—आओ उदय ! नहीं नहीं, चंदन ! सौभाग्य से यह नाव बँधी है। हम इसमें चढ़कर नदी के पार चलें। उदय को रक्षा में सौंपकर मैं शीघ्र ही चित्तौड़ वापस आऊँगी, बारी ! तुम प्रकट करा कि पन्ना उदय का अंतिम संस्कार कर, चंदन को लेकर अपने पीहर चल दी।

बारी—यही होगा, भगवान् तुम्हारे रक्षक हों।

[बारी की मदद से पन्ना और उदय
का नाव में चढ़ना, और नदी-पार जाना।
दूसरी ओर से बारी का जाना।]

पट-परिवर्तन

द्वितीय दृश्य

बनवीर का महल

[विजय-गर्विता शीतलसेनी गाती हुई आती है ।]

खम्माच—तीन ताल

तू नाच मधुर मति से ।

प्रतिहिंसे ! हे रक्त-रंगिणी,

चपले ! चंचल पग से, यति से ।

(अंतरा)

भीमे ! चमक प्रलय में, रण में—

ब्रह्मांडों में कण-कण में ;

हों उल्लसित त्रिनेत्र महेश्वर,

जगे पराभव तांडव-गति से ।

शीतलसेनी—संग्रामसिंह का वंश मिटा दिया, किसने ? बनवीर ने । बनवीर किसका साधन है ? मेरा । मुझे यह कौन नचा रही है ? मेरे मनोराज्य में रहनेवाली आकांक्षा । आकांक्षे ! तेरी तृप्ति न होगी क्या ? तू क्या चाहती है ? तुझे मेवाड़ का राजमुकुट दिया, दिल्ली का सिंहासन भी दूँगी ।

[एक ओर को जाती है, दूसरी ओर से
रणजीत का आना ।]

रणजीत—ज्यों-ज्यों राजतिलक का दिन निकट आ रहा है, त्यों-त्यों शीतलसेनी का भाव मुझसे रूखा होता जा रहा है। यदि उसने अपना काम लेकर मुझे प्रधान पद न दिया, तो? तो भी क्या चिंता है? मेरे पास उसके हस्ताक्षर हैं, मैं उसके रहस्य से परिचित हूँ। [बनवीर को आता देखकर] महाराना बनवीर की जय!

[बनवीर का आना ।]

बनवीर—महाराना बनवीर की जय! अभी परसों तक ये होंठ महाराना विक्रम की जय पुकारते थे। आज समस्त मेवाड़ एक स्वर से कहता है—'महाराना बनवीर की जय!' सबका माथा मेरे आदर के लिये विनत होता है। रणजीत! मैं ही मेवाड़ का महाराना हूँ?

रणजीत—हाँ, आपके पथ के सभी कंटक प्रायः दूर हो चुके हैं। शत्रु का कुछ भी भय नहीं है महाराना! आप ही मेवाड़ के महाराना हैं।

बनवीर—प्रजा के इस संबंध में क्या विचार हैं?

रणजीत—इस फसल के लगान की छूट मिलने से सारी प्रजा में आनंद छा गया। वह आपकी जय पुकारती है। उस जय-नाद में विक्रम और उदय के वध की क्रंदन-ध्वनि न-जाने कहाँ लीन हो गई!

बनवीर—रणजीत ! प्रजा क्या समझती है, विक्रम का वध किसने किया ?

रणजीत—विक्रम का वध अत्यंत गुप्त रक्खा गया था, इस पर प्रजा विक्रम को कब चाहती थी, जो उसके वधिक की चिंता करती। वह आपको पाकर संतुष्ट है।

बनवीर—किंतु उस अबोध बालक उदय का वध, रणजीत ! वह न छिप सकेगा। पन्ना सब कुछ जानती है।

रणजीत—वह भी ठिकाने से लगा दी जायगी।

बनवीर—उसी रात से उसका पता नहीं है, वह अपने बेटे को लेकर न-जाने कहाँ चल दी !

रणजीत—यह ठीक ही हुआ। महाराना, आप निश्चित रहें, समस्त प्रजा आपके साथ है।

[सरोष कर्मचंद का प्रवेश।]

कर्मचंद—इसका प्रत्येक अक्षर झूठ है। राजकर्मचारियों के भय से प्रजा रास्ते और गलियों में अवश्य ही नए महाराना की जय पुकारती है, किंतु हर रात को प्रत्येक घर में इस राक्षसी हत्या की चर्चा छिड़ी रहती है।

बनवीर—इस राक्षसी हत्या से आपका अर्थ विक्रम और उदय के वध से ही होगा। प्रजा क्या कहती है कि यह वध किसने किया ?

कर्मचंद—वध करते किसी ने नहीं देखा। इसी से वह अनुमान करती है, किंतु क्या अनुमान सत्य की जन्मभूमि नहीं है ?

बनवीर—आप क्या समझते हैं ?

कर्मचंद—न पूछो बनवीर ! उसे न पूछो। तुम तो उदय के संरक्षक थे।

रणजीत—चित्तौड़ के महाराना के समीप सोच-समझकर मुख खोलिए।

कर्मचंद—चुप रहो चाटुकार ! तुम्हारी वाणी में विष है। तुम तलवार की छाया में इस रक्त को नहीं छिपा सकते।

बनवीर—कौन-सा रक्त ? किसकी हत्या ?

कर्मचंद—बँधे और सोए हुए दो भाइयों की हत्या। यह तेरे माथे पर खुदी हुई है। यह आग-पानी से धुल नहीं सकती, यह सोने-मोती से ढक नहीं सकती।

बनवीर—तुम भूल रहे हो सरदार ! यदि मैंने विक्रम का वध किया है, तो क्या संकेत आपने नहीं दिया ? मेरे काले बालों में यह रक्त छिप जायगा, पर आपकी सफेद दाढ़ी को रँग देगा।

कर्मचंद—राजमद के अंधे ! क्या तू यही देख रहा है ? तुझे इस हत्या के लिये क्या मैंने अग्रसर किया ?

बनवीर—विक्रम को बंदी कर, मुझे उसके सिंहासन में बिठानेवालों में क्या आपके और आपके पुत्र जयसिंह के शब्द सबसे ऊँचे न थे ?

कर्मचंद—पर तेरे हाथों में रक्षा का भार सौंपा गया था, वध के लिये कटार न दी गई थी।

बनवीर—उसको मैंने अपनी बुद्धि से हाथ मे लिया। आपने मुझसे सिंह को छेड़कर बंदी करने को कहा। मैंने उसका वध किया, तो कौन-सा नीति विरुद्ध काम किया? वह घायल सिंह कभी-न-कभी पिंजरा तोड़कर सबसे पहले मुझ पर झपटता। अवश्य ही कुछ लोग भी उसका साथ देते। उनके वार को बचाने के लिये हमें भी अपनी तलवारें सँभालनी पड़ती। मेवाड़ मे कुछ रक्त की बूँदें बहाकर मैंने लहू की नदी रोकी है।

कर्मचंद—तूने अवश्य ही लहू की नदी रोकी है, बनवीर! जिस दिन उसका बाँध टूट जायगा, उस दिन उसके वेग में तू, तेरी कटार और तेरा सिंहासन, कोई भी स्थिर न रह सकेगा। चांडाल! तूने अपनी विष-भरी श्वास से बप्पा रावल के वंश का दीपक बुझा दिया! वह तेरी अंतिम श्वास न हुई!

रणजीत—अब असह्य है महाराना! आज्ञा दीजिए। आपके मान के लिये मेरा मस्तक नीचा ही नहीं है, वह उसकी रक्षा के लिये अलग भी हो सकता है। [तलवार की मूठ पर हाथ रखता है।]

बनवीर—आवेश मे न आओ रणजीत! इसकी आवश्यकता नहीं है। [कर्मचंद से] हाँ-हाँ, मैंने ही उदय का वध कर विक्रम के वध को पूर्ण किया। विक्रम को राजसिंहासन के लिये मारा। राजसिंहासन तुम्हारे अनुरोध से स्वीकार किया। आज तुम्हीं मुझे सबसे पहले दोषी ठहराते हो? क्या मैंने

पहले ही तुमसे नहीं कहा था कि मुझे राज्य नहीं चाहिए। जाओ-जाओ, तुमसे जो हो सके, करो। यदि तुमने और अधिक बाधा दी, तो यह बच्चे को मारनेवाला हाथ इस बूढ़े के लिये भी न हिचकेगा।

कर्मचंद—पापी! हत्यारे! तू मेरा वध करेगा? तेरा दर्प दलित हो। मैं अपने दुर्बल स्वर में समस्त मेवाड़ को प्रतिध्वनित करूँगा, सिंहासन पर घातक राक्षस है, इसी ने विक्रम का वध किया, इसी ने उदय की हत्या की।

[सवेग प्रस्थान, दूसरी ओर से शीतलसेनी का प्रवेश।]

शीतलसेनी—यह ज्वालामुखी क्यों फट पड़ा? इसका मुख सुवर्ण की शृंखला और मान-पदवी के जाल से जकड़ देना पड़ेगा।

बनवीर—मैं भी यही सोचता हूँ। कदाचित् कर्मचंदजी को यह संशय हो गया कि राजसभा में अब उनका आदर न होगा। मैं उनसे क्षमा माँग लूँगा। हमें प्रधान मंत्री के पद के लिये उनसे अधिक योग्य मेवाड़-भर में कोई और न मिलेगा।

रणजीत—राजमाता! राजमाता! क्या यह सच है?

[शीतलसेनी संकेत द्वारा रणजीत से चुप रहने को कहती है।]

शीतलसेनी—कर्मचंद से क्षमा माँगने की कोई भी आवश्यकता नहीं है।

रणजीत —यह बिल्कुल सच है। इससे वह बूढ़ा और सिर पर चढ़ेगा। तुम्हे किसका भय है, बनवीर? तुम मेवाड़ के महाराना हो। राजकोष तुम्हारा है, सेना तुम्हारी है।

बनवीर—निस्संदेह, जब तुम सहायक हो, तो मुझे कौन डरा सकता है?

[आवेश के साथ जाना।]

शीतलसेनी—यह कर्मचंद ही मेरी अंतिम बाधा है।

रणजीत—और मेरा पहला काँटा।

शीतलसेनी—इसी के कारण बनवीर का राजतिलक अभी तक रुका हुआ है।

रणजीत—और इसी के कारण मेरे लिये प्रधान मंत्री का पद रिक्त नहीं है।

शीतलसेनी—एक काम करोगे रणजीत!

रणजीत—हाँ-हाँ, मै समझ गया।

शीतलसेनी—तो जाओ, बूढ़ा अभी अपने महलों तक नहीं पहुँचा होगा।

रणजीत—मै रास्ते ही मे उसको समाप्त कर दूँगा।

[कटार निकालता है।]

शीतलसेनी—बिजली की गति से जाओ।

[दोनो का एक दूसरी ओर से प्रस्थान।]

पट-परिवर्तन

तृतीय दृश्य

अरवली की घाटी

[डूँगरपुर के राजा ईशकर्ण अपने सेनापति के साथ आखेट खलकर आते हैं।]

ईशकर्ण—आखेट खेलते खेलते तुम मुझसे अधिक थक गए हो, सेनापति ! आओ, कुछ क्षण इस छाया में विश्राम करें, और अरवली की इस प्राकृतिक छटा का निरीक्षण करें।

[दोनो एक वृक्ष की छाया में बैठते है।]

सेनापति—चित्तौड़ से आपके लिये महाराना बनबीर के राजतिलक का निमंत्रण आया है।

ईशकर्ण—हाँ, उसमे अवश्य ही सम्मिलित होना पड़ेगा, सेनापति ! तुमने चित्तौड़ का नवीन समाचार नहीं सुना ? वृद्ध सरदार कर्मचंदजी की भी हत्या हो गई है। उनका शव रक्त से रँगा हुआ, सड़क के किनारे पड़ा हुआ मिला। वधिक का कुछ भी पता नहीं है।

सेनापति—उनका कोई भी शत्रु न था, क्योकि वह सबको चाहते थे। राजा और रंक सभी उनका समान भाव से आदर करते थे, ऐसे न्यायनिष्ठ और वीर सरदार की मृत्यु राजस्थान के दुःख का कारण है।

ईशकर्ण—कोई-कोई समझते हैं, सरदार ने राजवंश का अंत देखकर आत्महत्या कर ली। हाँ, और कुछ लोग काना-फूसी करते है कि उन्हें महाराना बनवीर ने मरवा डाला।

सेनापति—किसलिये?

ईशकर्ण—कदाचित् नए महाराना का मन उस पुराने सर-दार से न मिला हो। जाने भी दें, हमारा इससे क्या बनता और बिगड़ता है। यह डूँगरपुर का राजा पहले विक्रम का अनुचर था, अब बनवीर के अधीन हुआ। किंतु महाराना बनवीर ने हमे बड़ी आशा दिलाई है।

[पन्ना और उदय का उदास भाव से गाते हुए प्रवेश।]

सोहनी—तीन ताल

चलत-चलत हारे।

विकट विपिन में दुख के मारे।

[१]

दिन में छानी धूलि राह की,

रात बिहानी गिन-गिन तारे;

जग की आशा छोड़ जगतपति!

आए शरण तुम्हारे।

[उदय के बाएँ पैर के अँगूठे में ठोकर लगती है। पन्ना गाते-गाते अपनी चादर का एक सिरा फाड़कर अँगूठा बाँध देती है।]

[२]

कर्णधार बिन फँसे भँवर मे,

नाथ, लगा दो नाव किनारे ;

हरे अनेकों के भय तुमने,

तुमने कितने पार उतारे ।

पन्ना—वन-वन भटकते हुए तुम्हारा मुख पीला पड़ गया। तुम्हारे वस्त्र मलीन हो गए, फट गए। तुम बहुत थक गए लाल! तुम्हे पीठ पर ले चलूँगी, अब डूँगरपुर निकट ही है।

उदय—नहीं, मा! तुमने कल से खाया ही नही है। मैं पैदल ही चलूँगा।

पन्ना—अगणित दीन-दुखियो के शरण, हिंदू-सूर्य बप्पा-राव के वंशज के लिये कहीं स्थान नही, हा भगवान!

उदय—इस पड़ की छाया मे कुछ देर विश्राम कर चले।

[जहाँ पर ईशकर्ण और उसके सेना-
पति बैठे थे, उधर संकेत करता है।]

पन्ना—[उधर देखकर] है, ये कौन? वेश-भूषा से निश्चय ही कोई राजवंशी प्रतीत होते हैं। इनका परिचय प्राप्त करूँगी। [उधर बढती है।]

ईशकर्ण—[सेनापति के साथ उठकर] इस निर्जन पथ पर दुख की सताई तुम कौन हो?

पन्ना—रक्षा! रक्षा! मैं एक भिखारिन हूँ। क्या श्रीमान् का परिचय पा सकती हूँ? [घुटने टेकती है।]

सेनापति—तू डूँगरपुराधीश के समीप बैठी है।

पन्ना—मेरा अहोभाग्य है। मै आप ही की सेवा मे उपस्थित होने को जा रही थी। आपने पथ मे ही दर्शन दिए।

ईशकर्ण—यह कौन, तेरा पुत्र है?

पन्ना—हाँ, मेरा पुत्र है, पुत्र भी जिस पर निछावर कर दिया जा सके, वह है। इसकी रक्षा कीजिए, महाराज! यह किसी दिन आपको इसका बदला देगा।

ईशकर्ण—[सेनापति से।] भिखारिन का बेटा कैसा बदला देगा? यह स्त्री पागल तो नहीं है?

पन्ना—इसके पिता ने बार-बार आपकी सहायता की है, इसे अपने महल मे ले जाकर इसका पालन-पोषण कीजिए, महाराज!

सेनापति—और सुनिए। यह अब टुकड़े खाना पसंद नहीं करता, राजमहल मे प्रतिपालित होना चाहता है।

ईशकर्ण—क्यो, किसलिये?

पन्ना—इसलिये कि यह आपके स्वामी संग्रामसिह का पुत्र—

उदय—[पन्ना की उँगली खींचकर बाधा देता है, और उसे एक ओर ले जाकर कहता है।] चुप रहो मा! इनके हृदय मे दया नहीं है, इन्हे अपना भेद न दो! चलो, हम सिह की माँद मे आश्रय खोजेंगे, कदाचित् वह हमारी रक्षा करे।

ईशकर्ण—क्या कहा? यह संग्रामसिह का पुत्र है? ठीक है, बिल्कुल सच है, किंतु इसे तो किसी ने मार डाला था।

पन्ना—किसी ने मार डाला था, पर मैने जिला दिया।

ईशकर्ण—इससे यह प्रकट होता है, तेरे पास अमृत भी है।

सेनापति—और भिखारी के बेटे को राजकुमार बना देने की विद्या भी।

ईशकर्ण—चलो सेनापति! राजधानी अभी दूर ही है। नहीं तो इसकी बातों में हम अपना कुछ समय देकर अवश्य मनोरंजन करते।

पन्ना—क्या मैं निराश हो जाऊँ महाराज?

सेनापति—दूर हो पगली! फिर कभी राजधानी में आना।

[ईशकर्ण और सेनापति का जाना।]

उदय—धाई-मा! अब कहाँ चलोगी? देवलराज की शरण में गई, वह बनवीर से डर गए। डूँगरपुर के राजा तुम्हें पागल समझते हैं। अब इस अरवली की किसी एक ही घाटी में हमारी सारी आशाएँ केंद्रीभूत हो जायँ, मा! हम और कहीं न जायँ। राजमुकुट की आशा छोड़ दो, उसमें क्या विशेषता है? हम वनवासी होकर कंद-मूल खायँ, और उसी में जीवन के सुख को खोजें।

पन्ना—नहीं-नहीं, ऐसा उच्चारण न करो, मेरे प्राण! अभी यह राजस्थान राना साँगा के ऋणग्रस्तों से पटा हुआ है। किसी के हृदय में तो करुणा जाग उठेगी। कमलमीर के अधिपति आशाशाह, वह धर्म की टेक रखते हैं, उन्होंने सदा तुम्हारे पिताजी का साथ दिया। वह आज अवश्य ही तुम्हारी रक्षा करेंगे।

उदय—कमलमीर बहुत दूर होगा। मा! अब नहीं चला जाता। मुझे बड़ी देर से प्यास लगी है।

पन्ना—मैं धीरे-धीरे तुम्हें गोद में ले चलूँगी। तुम सावधानी से यहीं पर बैठे रहो, मैं अभी जल खोजकर लाती हूँ।

[पन्ना का जाना, कुछ तान्त्रिकों का आना।]

तांत्रिक नं० १—पकड़ लो, पकड़ लो।

तांत्रिक नं० २—यही है।

[उदय के पास जाकर दो तांत्रिक उसके दोनो हाथ पकड़ लेते हैं।]

उदय—मुझे पकड़कर क्या करोगे?

तांत्रिक नं०१—चलो, वहीं ज्ञात हो जायगा।

उदय—छोड़ दो। छोड़ दो। मेरे पास इस सोने के तावीज़ के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है।

तांत्रिक नं० २—हमे यह नहीं चाहिए, तेरी ही आवश्यकता है।

उदय—मुझे बड़ी प्यास लगी है, मेरी मा जल लेने गई है। मुझे पानी पी लेने दो।

तांत्रिक नं० १—चलो, वहीं पिलाएँगे। हमारे सरदार को तुम्हारी आवश्यकता है।

उदय—किसलिये?

तांत्रिक नं० २—तुम्हें काली को भेट चढ़ाया जायगा। सरदार ने सपना देखा है, माता बड़ी भूखी हो गई है।

उदय—वह मेरी बलि से तृप्त हो। मैं भी यही खोज रहा था, पर मुझे मेरी माता से बिदा हो लेने दो। वह आती ही होगी, एक क्षण ठहरो।

तांत्रिक नं० १—नहीं-नहीं, हमें ऐसी आज्ञा नहीं है।

[तांत्रिक उदय को पकड़कर ले जाते हैं। दूसरी ओर से दोने में जल लेकर पन्ना का प्रवेश।]

पन्ना—[उदय को न पाकर इधर-उधर देखकर] हैं! कहाँ? किधर? इसी पेड़ की छाया में तो वह बैठा था। उसने कभी मेरी अवज्ञा नहीं की। [पुकारती है।] उदय! उदय!!...... उदय!!! [उत्तर न मिलने से अधिक चिंतित होती है, जल का दोना हाथ से पृथ्वी पर छूट जाता है।] हा भगवान्! उत्तर नहीं देता? कहाँ चला गया? क्या किसी हिंसक जीव का ग्रास तो नहीं हो गया [पृथ्वी में कुछ पद-चिह्न देखकर] कुछ मनुष्यों के पद-चिह्न धूलि में अंकित हैं, उनके बीच में उदय के सुकुमार और नंगे पैर का साँचा भी है। उसके बाएँ अँगूठे में ठेस लग जाने के कारण मैंने कपड़ा बाँध दिया था, वह भी छिपा नहीं है। उसे कोई पकड़ ले गए। इधर को गए हैं। मैं इन्हीं का अनुसरण करूँगी।

[पदांकों का अनुसरण करते हुए पन्ना पृथ्वी को देखती हुई जाती है।]

पट-परिवर्तन

चतुर्थ दृश्य

बनवीर का दरबार

[सिंहासन में बनवीर, प्रधान मंत्री का आसन रिक्त, रणजीत, छंदावत आदि सरदार अपने-अपने आसनों में सुशोभित, एक ओर राजमुकुट लिए शीतलसेनी, दूसरी ओर पूजा-सामग्री लिए राजगुरु, दोनो ओर द्वारपाल।]

बनवीर—मेवाड़ के शुभचिंतक, सभी राजाओं तथा सरदारों ने इस राजतिलक की सभा मे पधारकर उसकी शोभा को बढ़ाया है। आपकी उपस्थिति से यह भी प्रकट है कि आप मेरे साथ ही हैं। प्रजा में न्याय और व्यवस्था फैलाने के लिये ही मेरे सिर पर राजमुकुट रक्खा गया है। आप लोग मुझे सहायता दें कि वह कर्तव्य पूर्ण हो। अवश्य ही मेवाड़ की शांति के लिये मुझे कटार भी लेनी पड़ी। पर वह अनिवार्य थी। मैं सब बातों से संतुष्ट हूँ, किंतु हमारे प्रधान सरदार कर्मचंद का आसन शून्य है, इसी का मुझे खेद है।

छंदावत सरदार—राव कर्मचंद के पुत्र जयसिंह अपने पिता के शून्य आसन के योग्य अधिकारी हैं। विद्या-बल,

न्याय-नीति और रण-कौशल में उन्हीं के समान हैं। यह आसन क्यों न उन्हीं का हो ?

बनवीर—मेरा भी यही निश्चय है। राज्य के इस परिवर्तन के वही आदि कारण हैं। पर इधर उनकी उदासीनता विस्मय-जनक है।

शीतलसेनी—उनके लिये सबसे पहले इस राजतिलक का निमंत्रण भेजा गया था। पर वह अभी तक नहीं आए।

रणजीत—मैं जयसिंह को मंत्री-पद देने के बिलकुल ही विरुद्ध हूँ, क्योंकि उनकी समवेदना महाराना बनवीर के साथ अब कुछ भी नहीं है। उनको यह आसन न दिया जाना चाहिए, वह स्वयं भी इसे न लेंगे।

शीतलसेनी—उनके न लेने पर अवश्य ही यह किसी दूसरे अधिकारी का हो।

रणजीत—[स्वगत] वह अधिकारी श्रीमान् रणजीत हैं।

छुंदावत सरदार—अवश्य ही जयसिंह अपने पिता कर्मचंद के उस एकाएक वध से व्याकुल हो गए हैं।

बनवीर—किंतु बनवीर ने उन्हें नहीं मारा।

[नेपथ्य में घंटा-शंख के नाद के बाद सुमधुर वाद्य-ध्वनि होती है।]

राजगुरु—राजतिलक का शुभ मुहूर्त आकर उपस्थित हुआ। तिलक कीजिए महाराज !

बनवीर—मैं प्रस्तुत हूँ।

[राजगुरु बनवीर का तिलक करते हैं।
शीतलसेनी मुकुट पहनाती है।]

शीतलसेनी—गाओ, गाओ, विद्याधरियो! मेवाड़ के नए महाराज के लिये मंगल-गीत गाओ।

[विद्याधरियाँ ज्यों ही आकर गीत
आरंभ करती हैं, त्यों ही जयसिंह वेग-पूर्वक
आकर उनके गीत में बाधा पहुँचाता है।]

जयसिंह—किंतु सावधान! अभी ठहरो, मुझे इस उत्सव को अमंगल से परिपूर्ण कर लेने दो।

छुंदावत—कौन, सरदार जयसिंह!

जयसिंह—हाँ, अभागा जयसिंह, जिसके वृद्ध पिता की तुमने धोखे से हत्या की।

शीतलसेनी—हमने हत्या नहीं की, सरदार महोदय! हमने उनके शून्य आसन के लिये तुम्हें ही नियुक्त किया है।

बनवीर—वह आसन मेरे सबसे निकट है। आओ, आओ भाई! उस पर सुशोभित होकर मेवाड़ के मनुष्य-मात्र के मंगल के लिये मुझे मंत्रणा दो।

जयसिंह—चुप रहो हत्यारो! तुम मेरे मन को अपना सिंहासन देकर भी क्रय नहीं कर सकते। तुमने निर्दोष रक्त की तीन नदियाँ बहाई है, मैं उसी रक्त को छिड़ककर तुम्हे और तुम्हारे इस उत्सव को कलंकित करूँगा।

रणजीत—सावधान, सरदार! पिता के शोक मे तुम्हारा

मस्तिष्क ठीक-ठीक काम नहीं कर रहा है। शांति से काम लो। तुम्हारे मुख से राजसभा मे कहने योग्य शब्द नहीं निकल रहे हैं। सावधान होओ!

जयसिंह—चुप रहो, रणजीत! मैं तुम्हे भी ख़ूब अच्छी तरह से जानता हूँ।

बनवीर—मैं तुम्हें सचेत करता हूँ। जीवन का भय करो।

जयसिंह—जीवन का भय? नहीं, तिल-भर नहीं। किसके लिये? उदय का मुख देखकर विक्रम-वध भूला जा सकता था, पिता की सेवा कर उदय की हत्या भी विस्मृत हो जाती, पर तुमने मेरे जीने के लिये कुछ भी नहीं छोड़ा है। [तलवार निकालकर] तुम तलवार का भय दिखाते हो, बनवीर! तुम घातक हो, तुम मेरा सामना नहीं कर सकते। मैं बँधे हुए महाराना विक्रम नहीं हूँ, सोता हुआ बच्चा उदय नहीं हूँ, अकेले राह चलते हुए वृद्ध सरदार कर्मचंद नहीं हूँ। मै तेरे ऐसे राज्यारोहण की तृष्णा को धिक्कारता हूँ। तेरे मेवाड़ का इस तलवार के साथ त्याग करता हूँ। [तलवार फेक देता है।] जब तक जीता रहूँगा, तेरे इस पाप-राज्य की कथा को आर्यावर्त के कोने-कोने मे पहुँचा दूँगा। बप्पाराव के पवित्र वंश का नाश करनेवाले, तेरा अंत हो!

[सवेग प्रस्थान।]

रणजीत—यह निस्संदेह पागल हो गया है। हम सब चुप ही रहे, यही उचित भी था। जाने दो, बला ऐसे ही टल गई।

शीतलसेनी—बकने भी दो उसे। उसके कहने से होता ही क्या है? विद्याधरियो! तुम भी चुप हो गईं? अपने सुमधुर गीत से राजसभा में हर्ष की प्रतिध्वनि करो।

[विद्याधरियाँ गाती हैं।]

पहाड़ी खम्माच-दादरा

आज राजतिलक की गाओ बधाई।

प्रकटा सुख दुरित हुई दुख की परछाई।

[१]

जब तक रवि की रश्मियाँ आलोक प्रकाशें,

कलियों में सुमन मन में भव्य भाव विकासें,

तब तक हो शत्रु-हीन यह संसार आपका,

सुख-शांति-श्री से पूर्ण हो भांडार आपका।

हो कीर्ति का प्रकाश,

भवन में,

भुवन में,

गगन में,

सुख-सौभाग्य की घड़ी आई।

आज राजतिलक की गाओ बधाई।

दृश्य-परिवर्तन

पंचम दृश्य

गुफा में काली की विशाल मूर्ति के समीप

[तान्त्रिकों का दाहना हाथ-कटा गुरु बहादुरसिंह मूर्ति की आरती उतार रहा है। उदय का सिर यूप-काष्ठ से बँधा है, उसके ऊपर वधिक नंगी तलवार लिए सरदार की आज्ञा की प्रतीक्षा कर रहा है। इधर-उधर और भी अनेक तांत्रिक हैं। सब गाते हैं।]

केदार—तीन ताल

सब—जय-जय काली, श्मशान-वासिनि !
पाप-विनाशिनि ! पुण्य-प्रकाशिनि !

[१]

रिपु-मस्तक हत करनेवाली,
भक्तों का भय हरनेवाली !
डरनेवाली नहीं काल से,
महाकाल की वक्ष-विहारिणि !

[२]

उदय—दुःखों से पीड़ित हुई, व्याकुल है संतान,
दयावती जननी नहीं क्या तुमको कुछ ध्यान !

[२]

सब—लोक-प्रसिद्ध कीर्ति है तेरी,

ऋद्धि-सिद्धि चरणों की चेरी।

खरतर असि सँभाल ले कर में,

उठ मा जाग, जाग संहारिणि!

उदय—हाय! क्या तुम सब मेरा ही वध करोगे? क्या मैंने संसार-भर का अपराध किया है?

बहादुरसिंह—निस्संदेह, तुम्हारे रक्त से काली माई की प्यास बुझेगी, और देश की अवृष्टि दूर होगी। मा बहुत दिनों से प्यासी है।

उदय—नहीं-नहीं, मेरे रक्त की एक बूँद भी यह पत्थर की मा न सोख सकेगी। उसकी प्रत्येक धार इस कठोर धरती पर तुम्हारी पाप-कथा को अंकित कर सूख जायगी। छोड़ दो, मुझे छोड़ दो, राक्षसो!

बहादुरसिंह—हमें राक्षस न समझो। तुम्हारी बलि में हमारा कोई भी स्वार्थ छिपा हुआ नहीं है। वीर बालक, मृत्यु का भय छोड़ दो, तुम स्वर्ग में निवास करोगे। तुम्हारे मरने से अनेक जीवित रहेंगे, वधिक! तुम तैयार हो?

वधिक—हाँ, महाराज!

उदय—ठहर जा, केवल एक क्षण ठहर जा। अरे वध की आज्ञा देनेवाले अधर! मुझे अंतिम बार कुछ कहना है।

बहादुरसिंह—कहो, तुम्हारे जीवन के अतिरिक्त सब कुछ स्वीकार करेंगे।

उदय—मैं जीवन की भीख नहीं माँगता, मेरे बंधन खोल दो।

बहादुरसिंह—[बंधन खोलकर] कहो, क्या चाहते हो?

उदय—[गले से तावीज़ निकालकर] अगर मेरी अभागिनी मा मेरा पता लगाते हुए कभी तुम्हें मिल जाय, तो यह उसका तावीज़ उसे देकर कह देना, तेरा बेटा सुख से मरा। [बहादुरसिंह को तावीज़ देता है।]

बहादुरसिंह—[तावीज़ पहचानकर स्वगत] हैं, यह क्या? यह तो मेरा ही तावीज़ है। यह कौन? मेरा बेटा चंदन ही तो नहीं है, तथा इसकी मा पति को त्यागी हुई पन्ना ही तो नहीं है?

वधिक—महाराज, मुझे आज्ञा दीजिए।

बहादुरसिंह—तुम्हारा नाम क्या है, बेटा?

उदय—मेरा नाम चंदन है।

बहादुरसिंह—तलवार नीची कर इसके बंधन खोल दो वधिक!

वधिक—यह क्या कहते हो सरदार! मा कोपित हो जायगी!

बहादुरसिंह—[इसी समय उदय के बँधे अँगूठे को देखता है।] होने दो, कुछ भी चिंता नहीं, संतान को बचाना होगा। यह

देखो, इसका अंग खंडित है, इसकी बलि स्वीकृत न होगी। बंधन खोल दो।

[वधिक और बहादुरसिंह उदय के बंधन खोलते हैं। पन्ना का पर्दाकों का अनुसरण करते हुए प्रवेश।]

पन्ना—चंदन ! चंदन ! तुम्हें यहाँ कौन लाया ? सावधान ! राक्षसो ! इसका बाल भी बाँका हुआ, तो अच्छा न होगा।

बहादुरसिंह—न होगा, क्योंकि परमेश्वर की यही इच्छा है। हम अवश्य ही यहाँ इसको बलि देने लाए थे, पर अब मा कहती है, इसको बचाना होगा। मैं तथा मेरे साथी [साथियों की ओर संकेत करता है, सब साथी सरदार की इस इच्छा पर हाथ जोड अपना सिर नवाते हैं।] सब कुछ छोड़कर तुम्हारी सहायता को तैयार है। तुम उसे खोजती भी प्रतीत होती हो। कहो-कहो, तुम क्या चाहती हो ?

पन्ना—यह क्या सुनती हूँ। [स्वगत] जो रक्षक था, उसने भक्षण किया। [प्रकट] तुम भक्षक होकर रक्षा करोगे ?

बहादुरसिंह—हाँ-हाँ, करेंगे। हमें तुम क्या हिंसक समझती हो ? नहीं-नहीं, हम दया भी करते हैं। हमारे धर्म भी है। [स्वगत] वही है, पन्ना ही है। दुख की सताई न पहचानी जाती है, न पहचान ही सकती है। मैं भी चुप ही रहूँगा। [प्रकट] तुम चुप हो ?

पन्ना—नहीं, मैं तुम्हारा आग्रह करूँगी। मुझे कमलमीर जाना है। मेरा बच्चा थक गया है।

बहादुरसिंह—मैं तुम्हारे बच्चे को स्वयं कंधे पर बिठाकर ले चलूँगा। [उदय को कंधे पर बिठा लेता है।]

पन्ना—तुम्हारी दया! [बहादुरसिंह को एक हाथ से हीन देखकर] हैं, कौन हो तुम ? [वस्त्र की दाहनी खाली बाँह हाथ में लेकर] तुम्हारा एक ही हाथ है। मैं पहचान गई। स्वामी! प्राणनाथ! मुझसे कौन-से अपराध हुए?

बहादुरसिंह—पन्ना! पन्ना!

[उदय बहादुरसिंह के कंधे पर है। पन्ना उसके चरणों पर गिरती है। अन्य तांत्रिक आश्चर्यान्वित हैं। स्थिर दृश्य।]

य व नि का







बहादुरसिंह—
पन्ना !
पन्ना !

राजमुकुट
द्वितीय अंक की
य व नि का
[पृष्ठ ९०]

गंगा-फ़ाइनआर्ट-प्रेस, लखनऊ

तृतीय अंक

प्रथम दृश्य

कमलमीर का दरबार

[कमलमीर के अधिपति अपने एक मंत्री के साथ बातें कर रहे हैं। द्वारपाल का आना।]

द्वारपाल—[प्रणाम कर] कमलमीर के स्वामी की जय हो ! एक बालक और एक बूढ़े के साथ एक दुखिया द्वार पर खड़ी है। श्रीमान् को अपने दुःख की कथा सुनाने के लिये दरबार में प्रवेश चाहती है। आज्ञा मिले।

आशाशाह—हाँ, दुखिया के लिये द्वार खुला ही रहे, द्वारपाल ! वह प्रवेश प्राप्त करे।

[द्वारपाल का जाना। आशाशाह और मंत्री फिर बातें करते हैं। पन्ना, बहादुरसिंह और उदय का प्रवेश।]

तीनो—जय हो, कमलमीर के अधिपति की जय हो।

आशाशाह—कौन ? तुम यहाँ किसलिये आए हो ?

पन्ना—सब कुछ कहूँगी रावसाहब ! किंतु—[मंत्री की ओर देखकर कुछ कहने में हिचकिचाती है।]

आशाशाह—[पन्ना के अभिप्राय को समझकर] अच्छी बात है, आप अब इस समय जा सकते हैं। मैं इसकी बातें सुनना चाहता हूँ।

मंत्री—जो आज्ञा। [अभिवादन कर प्रस्थान।]

आशाशाह—हाँ, कहो, तुम क्या चाहती हो?

पन्ना—शरण चाहती हूँ, रावसाहब! आज समस्त मेवाड़ में उसके स्वामी के लिये स्थान नहीं है। [बहादुरसिंह कुछ चकित होता है।]

आशाशाह—यह मेवाड़ का स्वामी कौन? यदि तुम्हें पागल न समझें, तो तुम्हारी बातें रहस्य से भरी है! स्पष्ट कहो, तुम क्या चाहती हो?

पन्ना—[उदय को सामने कर] यह महाराना संग्रामसिंह का सबसे छोटा बेटा उदयसिंह है। [बहादुरसिंह सिर से पैर तक काँपकर स्तंभित रह जाता है।] मैं इसकी धाई हूँ, मैं इसे हत्यारे बनवीर के छुरे से बचा लाई हूँ। इसको शरण दो, इसकी रक्षा करो।

बहादुरसिंह—तुम यह एक ही साँस में क्या कह गईं पन्ना! [उदास भाव से] चंदन कहाँ है? यह राजकुमार उदय है?

पन्ना—हाँ, यही राजकुमार उदय है।

आशाशाह—किंतु उसकी तो बनवीर द्वारा की गई हत्या लोक में प्रसिद्ध हुई है। तुम किस तरह राजकुमार को बचा लाई हो?

पन्ना—अपने बेटे को खोकर।

बहादुरसिंह—[उत्सुक होकर] किसको ? चंदन को ?

पन्ना—[उदास स्वर में] हाँ, चंदन ही को। [बहादुरसिंह हतोत्साह हो जाता है।] मुझे हत्यारे की इच्छा ज्ञात हो गई थी। बनवीर के आने से पहले ही मैंने उसे उदय की सेज पर सुला दिया। जिसके लिये मैंने अपने बेटे को बलि दी है, उसी के लिये आप इसकी रक्षा करें।

बहादुरसिंह—तुम क्या यही सब कहने के लिये मुझे राज-दरबार में लाई हो ? तुमने अब तक मुझसे इस भेद को छिपाया, तुम इसे गुप्त ही क्यों न रख सकीं ? तुम क्यों कहती हो कि यह चंदन नहीं है ?

पन्ना—तो क्या तुम चाहते हो कि चित्तौड़ का पवित्र राजवंश समाप्त हो जाय ? नहीं-नहीं, सेवा को स्वर्गीय करने के लिये स्वामी की भी प्रतिष्ठा होगी। उसके लिये बलिदान भी करना पड़ेगा।

बहादुरसिंह—संसार और समाज को तिरस्कृत कर मैं निर्जन गुफाओं के अंधकार में किसी का अनुसंधान कर रहा था। बहुत दिन बाद इस राजकुमार का मुख दिखाई दिया, तुमने बतलाया कि यह पुत्र है।

पन्ना—और आप भी स्वयं मन से निर्णय करें कि स्वामी के लिये अपने पुत्र को निछावर कर देना क्या पाप है ? चंदन खो नहीं गया, इस अनंत नील आकाश में वह भी एक नक्षत्र है।

आप इसी को चंदन समझे, यह भी अपने को संसार मे चंदन ही प्रकट करता है।

बहादुरसिंह—तुमने पुत्र की मरीचिका दिखाकर मुझे फिर ऐसे माया भरे संसार में छोड़ दिया !

पन्ना—[आशाशाह से] इस रहस्य को हमारे सिवा केवल एक राजमहल का बारी और जानता है। उसने इसे गुप्त रखने की प्रतिज्ञा की है। आशा है, आप भी इसे प्रकट न करेंगे।

बहादुरसिंह—क्यो, ऐसा ही मुझे भी करना होगा क्या ?

पन्ना—हाँ, जब आप इसे चंदन ही समझेंगे, तो यह भेद स्वयं ही अप्रकट रहेगा।

आशाशाह—हम तुम्हारे इस रहस्य को सावधानी से गुप्त ही रक्खेगे। तुमने स्वामिभक्ति का मूल्य बहुत बड़ी वस्तु से दिया, इसमे हमे कुछ भी संदेह नहीं है, किंतु तुम जानती ही हो, महाराना बनवीर की प्रभुता के समीप कमलमीर के अधिपति की कुछ भी गणना नहीं है। तुम्हीं कहो, दुर्बल आशाशाह किस तरह उनके शत्रु को आश्रय दे सकता है ? महाराना बनवीर को यह ज्ञात होने पर आशाशाह का मुंड कहाँ पर गिरेगा, मैं भले प्रकार जानता हूँ।

पन्ना—मुझे शरण दो, मैं बड़ी आशा से आपके पास आई हूँ। क्या आप इतने कायर हैं ? वधिक का ऐसा प्रताप है ? मुझे निराश न करो रावजी !

आशाशाह—मैं अपनी दुर्बलता प्रकट कर चुका हूँ।

पन्ना—सत्य का पक्ष न छोड़ें, महाराज! संग्रामसिंह आपके भी स्वामी थे।

आशाशाह—निस्संदेह संग्रामसिंह ने मुझ पर अनेक उपकार किए हैं।

[आशाशाह की माताजी का प्रवेश।]

माताजी—और तुम भूल गए हो क्या? एक बार युद्ध में तुम्हारी प्राण-रक्षा कर अपने शरीर के नब्बे घावों में एक घाव और जोड़ा था। ऐसे उपकारी स्वामी की सेवा करनी ही पड़ेगी पुत्र! [पन्ना से] मैंने ओट से तुम्हारी सब बातें सुन ली हैं, बहन! मैं अपनी इच्छा से तुम्हारे इस भेद में सम्मिलित होने को आई हूँ।

पन्ना—राजमाता के अनुग्रह की ऋणी रहूँगी।

माताजी—इनको शरण दो, बेटा। इनकी देख-रेख का सारा भार मैं लेती हूँ।

आशाशाह—यह तुम्हारा अनुरोध है, मा! तो अत्यंत गुप्त रखना पड़ेगा। काशी में जो मेरी बहन रहती हैं, उनका लड़का इतना ही बड़ा है। बाहर के लोगों पर यही प्रकट किया जाय कि यह हमारा भानजा है।

माताजी—ऐसा ही हो, डर की कोई बात नहीं है।

आशाशाह—नहीं मा! ऐसा न समझो। इस भेद का तिल भर भी आभास मिलने पर बनवीर अपने चारों ओर गुप्तचरों को फैला देगा।

बहादुरसिंह—चिंता त्यागिए रावजी! इस रहस्य के द्वार का चौकीदार मैं रहूँगा। आप कुछ भी भय न करें, मैं छाया की तरह राजकुमार का साथी बनूँगा, और इस भेद को प्रकट न होने दूँगा। मेरा यह दाहना हाथ संग्रामसिंह के लिये कट चुका, उसे छोड़कर मेरा सारा अंग संग्रामसिंह के पुत्र की रक्षा के लिये प्रस्तुत है। मैं अभी तक इसी धोखे में था कि यह मेरा बेटा है, मैं इसी भ्रम को सत्य समझकर इसे अपना बेटा ही समझता रहूँगा।

माताजी—आओ राजकुमार! तुम्हारा स्वागत है।

पन्ना—आपने सत्य का साथ दिया है, आपकी जय हो।

उदय—धाई मा! तुम यहीं रहोगी?

पन्ना—हाँ, यहीं रहूँगी। केवल एक बार चित्तौड़गढ़ जाकर अपनी आवश्यक वस्तुएँ ले आती हूँ। अब मैं निश्चिंत हूँ। अब मुझे और भी दूसरी वस्तुओं पर ध्यान देना है। बनवीर की शंका भी दूर होगी, और मेरा काम भी हो जायगा। मैं आज ही, अभी जाऊँगी।

बहादुरसिंह—मैं तुम्हारी सेवा में रहूँगा राजकुमार!

[पन्ना का चित्तौड़ की ओर बहादुरसिंह का उदय के पास जाना।]

अगले महल का परदा गिरता है।

द्वितीय दृश्य

बनवीर का महल

[उत्तेजित बनवीर के पीछे छंदावत सरदार का प्रवेश।]

बनवीर—छंदावत सरदार! तुम सदैव राजभक्त रहे हो। आज तुम्हारा ऐसा दुस्साहस! तुमने मेरे हाथ का दिया हुआ भोजन का दोना स्वीकार नहीं किया?

छंदावत सरदार—तो इससे क्या हानि हुई?

बनवीर—तुम्हे यदि यही स्वीकृत था, तो तुम सहभोज में सम्मिलित ही क्यों हुए थे?

छंदावत सरदार—मुझे धोका देकर निमंत्रित किया गया था।

बनवीर—समस्त सरदारों के बीच में मेरा अपमान हुआ है। घाव भर जाता है, सरदार! अपमान की आग भीतर-ही-भीतर सुलगती रहती है।

छंदावत सरदार—महाराना के आदर की तृष्णा न-जाने कुछ ही दिनों से क्यों इतनी बढ़ गई? मान की लालसा जितनी ही प्रबल है, झुके मस्तक उतने ही ऊँचे दिखाई देते हैं।

बनवीर—फिर ऐसा क्यो है? चित्तौड़ेश्वर का दिया हुआ दोना तुमने क्यों नहीं स्वीकार किया?

छंदावत सरदार—चित्तौड़ेश्वर ? [कुछ विश्राम देकर] नहीं, आपको दोना देने का कुछ भी अधिकार नहीं है। परमेश्वर न करे, यदि गुजरात का सुलतान फिर चित्तौड़ पर अधिकार कर ले, तो क्या हम उसका दिया हुआ दोना स्वीकार करेंगे ? कदापि नहीं। बप्पाराव के शुद्ध वंशज के अतिरिक्त और किसी को इसका अधिकार नहीं है।

बनवीर—क्या मैं राना साँगा के भाई, युद्ध-केसरी पृथ्वीराज का पुत्र नहीं हूँ ?

छंदावत सरदार—क्या मुझे भी कुछ और स्पष्ट कहना पड़ेगा ?

बनवीर—तुम्हारे शब्द मेरी शुद्धि और गौरव पर संशय करते हैं। यह मुझे असह्य है। मैं तुम्हें देख लूँगा।

छंदावत सरदार—मुझे देखने से पहले किसी और से सामना करना पड़ेगा। आप कौन-सा स्वप्न देख रहे हैं ? क्या आपको कमलमीर के समाचार नहीं मिले ?

बनवीर—[चिंतित होकर] कमलमीर के क्या समाचार हैं ?

छंदावत सरदार—चित्तौड़ के वर्तमान महाराना के लिये बहुत ही बुरे। आपने जिस वंश मे आग लगाकर समझ लिया था कि सब समाप्ति हो गई है, उसी वंश का दीपक कमलमीर के महलों मे उजाला कर रहा है।

बनवीर—अर्थात् ?

छंदावत सरदार—उदय जीवित ही है।

बनवीर—[कंपित होकर] जीवित ही है !

छंदावत सरदार—हाँ, और इससे भी बुरा समाचार यह है कि मेवाड़ के प्रमुख सरदारों ने उसकी सहायता करनी निश्चय की है।

बनवीर—तो अधिक-से-अधिक क्या होगा? वे सब मिलकर चित्तौड़ पर चढ़ाई करेंगे। किंतु मैं तुम्हारी बात का विश्वास ही क्यों करूँगा? मैंने उदय को अपने हाथ से मारा है, उसकी वह अंत समय की चीत्कार मुझे अब भी याद है।

छंदावत सरदार—आप भ्रम में पड़े हैं। वह उदय न था।

बनवीर—फिर कौन था?

छंदावत सरदार—धाई पन्ना का बेटा चंदन। राजदूत मेरी बातों को प्रमाणित कर देगा। मैं भी जाता हूँ। [जाना चाहता है।]

बनवीर—ठहरो, कहाँ जाते हो?

छंदावत सरदार—यदि आपका भय न होगा, तो कमलमीर ही जाऊँगा। चित्तौड़ के सिंहासन का सच्चा स्वामी वहीं है।

[छंदावत सरदार का जाना। दूसरी ओर से शीतलसेनी का आना।]

शीतलसेनी—तक्षक बच गया, बेटा! जिसको तुमने कुचला, वह केवल रस्सी थी।

बनवीर—हाँ, मैंने अभी-अभी सब कुछ सुन लिया। मैं भ्रमित था, साँच को झूठ से भिन्न न कर सका।

[रणजीत का आना।]

रणजीत—छंदावत सरदार विद्रोही हो गया है। वह राजपथ

पर प्रजा से कह रहा है कि तुम्हारा असली स्वामी उदय जीवित ही है।

बनवीर—उसे जीवित होने दो, रणजीत ! वह कर क्या सकता है ?

रणजीत—वह जीवित हो नहीं सकता महाराज ! यह अवश्य ही चित्तौड़ के विद्रोही सरदारों की माया है। उन्होंने पन्ना के झूठे त्याग की कथा से न-जाने किस मिट्टी के पुतले मे उदय के प्राण फूँके है। वह कदापि उदय नहीं है।

बनवीर—कुछ भी हो, महाराना बनवीर को किसका भय है ? मैं केवल अपने बाहु-बल से इन सबका सामना करूँगा। इस पर भी मेरे पास प्रचुर सेना है। मैंने समय पर उसका वेतन दिया है। वह मेरे लिये मरने का दम भरती है। अभी राजसभा एकत्रित हो। चलो, इस पर वहीं विचार होगा।

[बनवीर और रणजीत का जाना।]

शीतलसेनी—रणजीत का अनुमान झूठा है। वह उदय ही है, कोई और नहीं। राक्षसी पन्ना ने न-जाने संसार के किस सुख के लिये अपने बेटे को निगल लिया ? वैरी का बच्चा बच गया। नहीं, नहीं, उसे बचना न होगा। मैं स्वयं कमलमीर जाकर उसे इस बार समाप्त कर डालूँगी। रणजीत से भी कुछ न होगा, मै वेश भी बदल लूँगी, मेरा ऐसा भी साहस है।

[जाना।]

अगले रास्ते का परदा गिरता है।

तृतीय दृश्य

कमलमीर का राजपथ

[नेपथ्य में 'भिखारी' गाता है।]

भैरवी—तीन ताल

कोई नहीं इस जग में अपना।

[१]

सुख-वैभव है केवल छाया,
आशा है मृगतृष्णा - माया;
मुग्ध हुआ क्यों, क्यों है लुभाया ?
जीवन निद्रा, जग है सपना।

[उदय और बहादुरसिंह का आना।]

बहादुरसिंह—यह बहुत बुरी बात है, उदय ! तुम नित्य नदी-तट की सैर के लिये हठ करते हो। तुम्हे ज्ञात ही है कि यहाँ सब लोग जान गए है कि तुम कोई और हो।

उदय—तो हानि क्या है ? वे यह भी समझ जायँ कि मै महाराना संग्रामसिंह का बेटा हूँ। क्यो चाचाजी !

बहादुरसिंह—[उदय के मुख पर हाथ रखकर।] चुपो, चुपो,

क्या कहते हो, कोई सुन लेगा। यदि बनवीर के कानों तक यह बात चली जायगी, तो कुशल न होगी।

उदय—मैं उस हत्यारे बनवीर से नही डरता। अब मैं पर्याप्त बलशाली हो गया हूँ। क्या आप मुझे इतने वर्षों से रण-कौशल नहीं सिखा रहे हैं? क्या मै आपका आलसी शिष्य हूँ?

बहादुरसिह—फिर भी राजकुमार! हमे डरना ही चाहिए। मैंने बनवीर के समान हिसक व्यवहार कहीं नही देखा। उसका मुझे बड़ा भय है। तुम अपने असली रूप मे प्रकट होने के लिये क्यो इतने अधीर हो? तुम स्वयं प्रकट होते जा रहे हो। उस दिन तुमने कमलमीर-दरबार की ओर से शोणिगुरु सरदार का जिस ढंग से स्वागत किया, उसे देखकर सरदार ने चकित होकर कहा था, यह कमलमीर के राजा का भानजा कदापि नही है।

उदय—हाँ, इसके बाद आपको ज्ञात ही नही है, उन्होंने अपना यह संशय आशाशाहजी से कहा। आशाशाहजी ने उनसे कुछ भी न छिपाकर मेरा सच्चा-सच्चा परिचय दे दिया। तब शोणिगुरु सरदार ने मुझे गले से लगाकर आशीर्वाद देते हुए कहा था—बेटा, यदि पूर्वजों की गद्दी को लेने का कभी तुम्हारे मन मे विचार हो, तो मुझे भी याद करना। बप्पाराव के अतीत गौरव के उद्धार के लिये मैं भी सहर्ष सहायता करूँगा।

बहादुरसिंह—सहायता की तो तुम्हे कमी न रहेगी। बप्पाराव का नाम जादू से भरा हुआ है। जिस दिन यह भेद सब पर प्रकट हो जायगा, उस दिन देखना।

उदय—प्रकट क्यो नही हो जाने देते, चाचाजी! मै अब छिपे-छिपे नहीं जी सकता। मेरे पिंजरे का द्वार खोल दो, मैं स्वतंत्र होकर इस मुक्त आकाश मे विचरना चाहता हूँ।

बहादुरसिंह—[भिखारी को गाते हुए आता देखकर] चुपो-चुपो, कोई आ रहा है।

[एक बूढ़े और अंधे भिखारी का गाते हुए आना।]

[२]

कंटक बिछे हुए है मग में,
कठिन क्लेश, दुख-ही-दुख जग में;
विरह-वियोग भरे पग-पग में,
कभी तड़पना, कभी कलपना।

भिखारी—दया करो बाबा! दया करो। तीन दिन से खाया नहीं है। भगवान् के नाम पर एक रोटी! [कहते हुए भिखारी का लाठी के सहारे से जाना।]

बहादुरसिह—धीरज धरो बेटा! वह दिन स्वयं ही निकट आ रहा है। [सुँघनी के लिये जेब मे हाथ डालता है, पर डिबिया को न पाकर।] किंतु असली बात तो रह गई है। मै अपनी सुँघनी की डिबिया तट पर ही भूल आया हूँ।

उदय—चाचाजी ! आपको सदैव यही उलाहना रहता है। आपकी आदत बड़ी भूलों से भर गई है। या तो आप भूलने का स्वभाव छोड़ दीजिए, या यह सुँघनी का अभ्यास।

बहादुरसिंह—इन दोनो मे से अब कोई भी न छूटेगा। मैं भी इन्हे अब जीते जी न छोड़ूँगा, उदय ! ये मेरे अस्तित्व के लिये आवश्यक है। तुम यहीं खड़े-खड़े कुछ देर मेरी प्रतीक्षा करो, मैं अभी उसे खोजकर लाता हूँ।

[बहादुरसिंह का जाना। भिखारी का गाते हुए फिर आना।]

[३]

श्याम - सलोना, वंशीवाला,
ब्रज का तारा, पथ का उजाला;
उसके गुण की लेकर माला
उसको सुमिर, उसी को जपना।

भिखारी—दया करो, दाता ! दया करो।

उदय—तुम कौन हो, बूढ़े भिखारी ! तुम सदैव दया का उपदेश देते रहते हो। मैंने तुम्हे इधर कई बार राजमहल के निकट देखा है।

भिखारी—देखा होगा बाबा ! मुझे ही कम दिखाई देता है। मेरी आँखों की ज्योति कुछ बुढ़ापे ने छीन ली, कुछ चुरा ली।

उदय—तुम्हारा नाम क्या है ?

भिखारी—कभी व्यवहार में न आने से कुछ भी याद नहीं पड़ता।

उदय—घर ?

भिखारी—भिखारी का कहाँ घर है ?

उदय—यहाँ कहाँ विश्राम करते हो ?

भिखारी—ठाकुरद्वारे के कुएँ पर जो पीपल का पेड़ है, उसके नीचे। तुम्हारी आयु बड़ी हो, मैंने परसों से कुछ भी नहीं खाया है।

उदय—करुणा तुम्हे कुछ दिया चाहती है।

भिखारी—जियो बेटा।

[जब उदय कुछ द्रव्य निकालने के लिये भीतरी जेब में हाथ डालता है, तब अंधा भिखारी छिपी कटार निकालकर उदय पर वार करना चाहता है। अचानक बहादुरसिंह आकर भिखारी का हाथ थाम लेता है। भिखारी कटार को फेंक, अपना हाथ झटका देकर छुड़ाकर भागता है। बहादुरसिह हाथ को छोड़, उसकी दाढ़ी पकड उसको रोकना चाहता है, पर दाढ़ी नक़ली होने के कारण उसके हाथ में ही रह जाती है, और भिखारी भाग जाता है। बहादुर-सिंह कुछ दूर तक भिखारी का पीछा करता है। उदय भूमि पर पड़ी कटार उठा लेता है।]

बहादुरसिंह—[लौटकर] भागकर भीड़ में मिल गया। क्यों देखा, उदय, कुछ समझ में आया ?

उदय—[कटार को दिखाकर] हाँ, यही कि आपने फिर मुझे मरने से बचाया, किंतु यह आश्चर्य है, आप ठीक समय पर कैसे आ पहुँचे ?

बहादुरसिंह—इस भिखारी को मैं कई दिन से देख रहा था। यह मेरी, विशेषकर तुम्हारी गति का निरीक्षण करता था। एक दिन मैंने इसे तुम्हारी ओर आँखे खोलकर ताकते देखा। मुझे उसी समय से इस पर संदेह हो गया, क्योंकि यह अपने को अंधा प्रकाशित करता था। अभी जब मैं तट से लौट रहा था, तो मैंने इसे तुम्हारे समीप सीधा खड़ा देखा। झूठे अंधे ने अपने को झूठा बूढ़ा भी सिद्ध किया। मैं द्रुतगति से तुम्हारे पास दौड़ा हुआ आया। मेरे आते-आते इसने तुम्हें अपनी कटार का लक्ष्य बनाना चाहा। यह विफल हुआ, परमेश्वर की दया हुई।

उदय—तो क्या यह घातक बनवीर ही ने भेजा है ?

बहादुरसिंह—हाँ, जान पड़ता है, हम बहुत दिन तक तुम्हें छिपाकर न रख सके। बनवीर पर सब कुछ प्रकट हो गया।

उदय—जिससे आप मुझे छिपाना चाहते थे, वही जब जान गया है, तो अब मेरे छिपे रहने से क्या लाभ है चाचाजी ?

[पन्ना का प्रवेश।]

पन्ना—कुछ भी नहीं उदय ! अब तुम्हें बहुत दिन तक छिपा

न रहना पड़ेगा। मेवाड़ ही नहीं, समस्त राजस्थान के सरदार और सिपाही राना साँगा के पुत्र की सहायता के लिये प्रस्तुत है। कमलमीर के अधिपति ने सबको निमंत्रित किया है। शीघ्र ही वे लोग राजदरबार में सम्मिलित होकर तुम्हारी सहायता के लिये विचार करेंगे। उन्होंने आज ही मुझसे यह सुसमाचार कहा है। मैं तुमसे कहने के लिये, तुम्हारी खोज करती हुई, इधर आई हूँ।

उदय—तुम्हें ज्ञात ही नहीं, अभी-अभी बनवीर ने मेरे वध की दूसरी चेष्टा की थी, किंतु इस बार इन्होंने मुझे बचा लिया, अब मुझे कोई नहीं मार सकता मा!

पन्ना—[उदय को रक्षा में लेकर] परमेश्वर का धन्यवाद है। अब हम तुम्हारी और भी अधिक रक्षा करेंगे। चलो, शीघ्र महलों को चलें, और जाकर उन्हें भी यह समाचार सुनावें।

[जाना चाहती है, पर नेपथ्य में बैरागी के वेश में जयसिंह को आता देखकर]

पन्ना—कौन? यह तो राव कर्मचंद के पुत्र राव जयसिंह है। इनके इस बैरागी-वेश की घटना से परिचित हो चुकी हूँ, किंतु सहसा पहचान नहीं पड़ते।

[जयसिंह का प्रवेश।]

जयसिंह—कौन? कौन? पन्ना! तुम यहाँ कमलमीर में कहाँ?

पन्ना—तुमसे कुछ भी न छिपाऊँगी। मै उदय की रक्षा के लिये सात साल से मेवाड़ का त्याग कर यहाँ रहती हूँ।

जयसिंह—[साश्चर्य] समझ नही पड़ता, किस उदय की रक्षा के लिये ?

पन्ना—[उदय को सामने कर] इसकी। लो पहचानो, यही उदय है।

जयसिंह—[सानंद] उदय! उदय! हाँ, यही उदय है। मैं स्वप्न तो नहीं देख रहा हूँ पन्ना! तुम उदय को जीवित करने के लिये अमृत कहाँ से ले आई ?

पन्ना—यह सब घर पहुँचकर सविस्तर कहूँगी।

जयसिंह—तुम धन्य हो, मा! मै निरुद्देश्य संसार-मार्ग में भटक रहा था। तुमने अपनी इस कर्तव्य-रक्षा से मुझे भी पथ दिखाया है। तुमने बप्पाराव के वंश-वृक्ष को बचा लिया। आज मेरा हृदय आनंद से परिपूर्ण है। [बहादुरसिंह की ओर संकेत कर] इनको कुछ-कुछ पहचान सका हूँ।

पन्ना—हाँ, यह मेरे स्वामी हैं, जो युगो से अदृश्य थे।

जयसिंह—ओहो! बहादुरसिंहजी, मुझे याद है, यह मेरे पिता के मित्र थे। आज्ञा दो मा, घातक सिंहासन मे नहीं देखा जा सकता। यह मेरे प्रभु का पुत्र है। [उदय के मस्तक पर हाथ रखता है।] इस भिक्षा-पात्र का त्याग कर मै फिर मेवाड़ की रक्षा के लिये तलवार हाथ मे लूँगा। [भिक्षापात्र और माला आदि फेंक देता है। उदय उसे अपने हाथ की कटार दे देता है।]

बहादुरसिंह—तुम मेरे मित्र की योग्य संतान हो।

पन्ना—चलो, महलों को चलें, वहीं सविस्तृत समाचार ज्ञात होंगे।

उदय—चलो-चलो, मा! बहुत दिन बाद आज देवता दाहने प्रतीत होते हैं।

जयसिंह—चलो-चलो, पिता का वध भूल सकूँगा, केवल इस आनंद में कि मेवाड़ राक्षस के पंजे से मुक्त होगा।

[पहले उदय, पन्ना, फिर जयसिंह, अंत में बहादुरसिंह का सुँघनी सूँघते हुए जाना।]

परदा उठता है।

चतुर्थ दृश्य

कमलमीर का दरबार

[पन्ना, उदय, बहादुरसिंह, छंदावत आदि अनेक सरदारों के साथ आशाशाह सिंहासन पर विराजमान है।]

आशाशाह—कमलमीर की यह राजसभा आज राजस्थान के प्रमुख सरदारो से सुशोभित है। आप सबकी बप्पारावल के पवित्र वंश के प्रति बड़ी श्रद्धा है। आपके पूर्वजो ने बार-बार मेवाड़ के शत्रु के विरुद्ध हाथ मे तलवार लेकर रण में प्राण दिए हैं। आपकी वीरता आपके त्याग से पवित्र हुई है। इस राज-सभा का उद्देश्य मेवाड़-संबंधी एक विचित्र सत्य के उद्घाटन से है। उसमे इस वीर बाला पन्ना का आत्मोत्सर्ग छिपा हुआ है। मा! इधर आओ, इस आसन से हमे अपने त्याग की कथा तार-स्वर से सुनाओ कि हम भी उसे सुनकर पवित्र हो।

पन्ना—अवश्य ही सरदार महोदय! किंतु इसलिये नहीं कि आप मेरा आदर करें, पर इस वास्ते कि उदय को उसका अधिकार प्राप्त हो। चलो उदय।

[उदय को साथ लेकर मंच पर चढ़ती है।]

आशाशाह—[सिंहासन से उठकर] आओ उदय, इस क्षुद्र आसन मे पधारकर उसे अपने स्पर्श से पवित्र करो।

[उदय सिंहासन मे बैठता है। पन्ना और आशाशाह सिंहासन की दोनो ओर खड़े होते है।]

आशाशाह—पन्ना ! आरंभ करो।

पन्ना—वह भेद यद्यपि बहुत-कुछ खुल चुका है, तथापि बहुतो ने इस पर अविश्वास किया है। मै इसी को सत्य प्रमाणित करूंगी। मेवाड के सिंहासन का शुद्ध अधिकारी यही महाराना संग्रामसिंह के बेटे उदयसिंह है। जिन्होंने इन्हे पहले कभी देखा है, वे पहचान सकते है।

[बैरागी का वेश बदलकर जयसिंह का आना।]

जयसिंह—हॉ, मैने इन्हे देखा है। यद्यपि सात साल के अदर्शन की अवधि बीच मे है, तथापि यह बहुत अच्छी तरह पहचाने जाते है। यही महाराना संग्रामसिंह के पुत्र महाराना उदयसिंह हैं।

पन्ना—उस रक्त की रात को मै इन्हे एक टोकरी में छिपाकर बारी की सहायता से गढ़ के बाहर निकाल लाई। मैने इनकी सेज पर जिसे सुला दिया था, उसी का वध कर बनवीर ने समझा, उदय का नाम-रूप मिट चुका।

सरदार नं० १—हम सुन चुके है, वह तुम्हारा पुत्र था।

तुम धन्य हो, मा ! तुम्हारे त्याग से इतिहास पवित्र हुआ।

पन्ना—आपके अधिक विश्वास के लिये मैं और कुछ भी न कह सकूँगी। यही महाराना संग्रामसिंह का अभागा पुत्र है। इसके सिंहासन पर घातक बैठा है।

सरदार नं० २—मैं आज ही मेवाड़ से आ रहा हूँ। मैंने उदय की रक्षा और शिक्षा के समाचार वहीं सुने। मेवाड़ के सच्चे अधिकारी के लिये मेरे प्राण भी निछावर हों।

छुंदावत सरदार—मैं बनवीर से रुष्ट होकर आया हूँ। मैं भी उसका सिंहासन उलटने में आपकी सहायता करूँगा। आज उसका ऐसा अभिमान है कि वह हमको अपना दिया हुआ दोना स्वीकार करने को बाध्य करता है।

आशाशाह—आप सभी सहायता के लिये प्रस्तुत हैं, तो भविष्य के लिये क्या विचार हैं?

बहादुरसिंह—इसी समय कूच के ढोल पीटे जायँ। 'महाराना उदय की जय'—बोलते हुए चित्तौड़ पर चढ़ाई हो। मेरा एक हाथ बचा है, उसमें ढाल नहीं, तलवार दीजिए।

आशाशाह—अनुभवी सैनिक! तुम्हारे जीवन का अधिक भाग यद्यपि युद्ध-क्षेत्र में कटा है, तथापि तुम इतने शीघ्र कूच की सम्मति देने में कुछ भी विचार करते प्रतीत नहीं होते।

बहादुरसिंह—मैंने विचारकर ही कहा है। आपको कदा-

चित् सेना और शस्त्रों की कमी दिखाई देती होगी, इसकी कुछ भी चिंता न कीजिए। मेवाड़वासी जो भी सुनेगा कि उदय जीवित हैं, वही इनकी सहायता के लिये हाथ में तलवार लेकर घर से निकल आवेगा। सत्य की रक्षा के लिये मेवाड़ का बच्चा बच्चा सैनिक बन जाता है, रमणियाँ शस्त्र सँभाल चल पड़ती हैं।

जयसिंह—मैं भी यही विश्वास करता हूँ। यदि आज ही कूच करना उतावली हो, तो कल चलना उचित होगा। चढ़ाई में अब विलंब न होना चाहिए। हमें राह चलते-चलते सहायता प्राप्त होगी। मैंने समस्त राजस्थान में घूम-घूमकर बनवीर के पाप की कथा फैलाई है। उनकी समवेदना मेरे साथ थी। उदय को जीवित पाकर वे सहायता को खिंच आवेंगे।

आशाशाह—बनवीर के सहायक कौन-कौन हैं?

छंदावत सरदार—मेवाड़ और उसके आस-पास के इतने सरदारों को तो मैं यहीं पर देख रहा हूँ। ये सब बनवीर से असंतुष्ट हैं। कुछ सरदार राह में हमारी संख्या बढ़ावेंगे। जो शेष रहेंगे, उनमें अवश्य ही कुछ उदासीन होंगे, तो बनवीर के लिये क्या बच रहेगा? रह गई उसकी वेतनभुक्त सेना, उससे होता ही क्या है?

आशाशाह—[उदय के प्रति] आप ही चित्तौड़ के महाराना हैं। चढ़ाई के संबंध में आपके क्या विचार हैं?

उदय—[सिंहासन से उठकर] तो क्या हानि है। आज अपने

युद्ध का पथ निश्चित कर लें, और शस्त्र-सेना को जाँच लें। कल प्रभात होते ही कूच हो।

आशाशाह—हमें महाराना की आज्ञा शिरोधार्य हो।

सब—जय, मेवाड़ के महाराना की जय!

[सब शस्त्र उठाकर 'जय' कहते हैं।]

अगले जंगल का पर्दा गिरता है।

पंचम दृश्य

युद्ध-क्षेत्र

[बनवीर और शीतलसेनी का आना ।]

बनवीर—तुम इस भयानक रणक्षेत्र मे क्यों चली आईं, मा! मैं तीन दिन से लगातार हार हो रहा हूँ। अब केवल मुट्ठी-भर वीरो को लेकर ही मुझे युद्ध करना है। आज अवश्य ही निर्णय हो जायगा।

शीतलसेनी—निराश न होओ, विजय तुम्हारी ही होगी।

बनवीर—कभी मैं भी समझता था कि विजय मेरी ही होगी, पर वह भूल थी। विजय मेरी अब कभी न होगी, मैं इसे जानता हूँ। फिर भी लड़ूँगा, इसके अतिरिक्त और कोई उपाय ही नहीं है। क्या तुम इस समय मुझे शस्त्र छोड़, दाँतो के नीचे तृण रखकर उदयसिंह की शरण जाने का उपदेश देने आई हो? किंतु अब बहुत आगे बढ़ चुका हूँ। [नेपथ्य में रण-वाद्य] वह सुनो, यह मेरी सेना का रण-वाद्य है। वह आ पहुँची, मुझे भी चला जाना चाहिए। तुम यहाँ क्या करोगी? कुछ ही देर में भयंकर मार-काट आरंभ हो जायगी, चली जाओ।

शीतलसेनी—मैं तुम्हारे कुशल-समाचारों के लिये व्यग्र

थी, चली जाऊँगी। [बनवीर का प्रस्थान।] पर नहीं, न जाऊँगी। मेरे प्राण बनवीर के लिये बेचैन हैं। मै यहीं रहूँगी। [एक वृक्ष को लक्ष्य कर] मैं इस वृत्त पर चढ़कर युद्ध की गति का निरीक्षण करूंगी, और आवश्यकता पड़ने पर काम आऊँगी।

[वृक्ष पर चढ़ जाती है।]

[बनवीर के नेतृत्व में बनवीर की सेना का प्रवेश और प्रस्थान। रण-वाद्य। उदय-सिंह, जयसिंह, बहादुरसिंह, आशाशाह और छदावत सरदार का गाते हुए प्रवेश।]

उदय की सेना का गीत

वारो हे सैनिक तन, मन, धन।

(१)

रक्त-भरे इस भीषण रण में—
मोह न उपजे तेरे मन में।
नृत्यशील हो खड्ग पवन में,
धर्म के लिये हो जीवन।

(२)

रिपु का तुझे न कुछ भी भय हो,
उसकी विषम शक्ति का क्षय हो।
जननी-जन्मभूमि की जय हो,
इस स्वर से गूँजे त्रिभुवन।

[गीत समाप्त कर आशाशाह, बहादुर-

सिंह, उदयसिंह, छंदावत सरदार तथा जयसिंह के सिवा सबका जाना।]

आशाशाह—समस्त सेना चार भागों में बँट चुकी है। पूर्व दिशा निरापद् है, उधर आज युद्ध सामान्य ही होगा। बहादुर-सिहजी ! आप महाराना उदयसिंह के हाथी के साथ रहकर उनकी और मेवाड़ के झंडे की रक्षा करेंगे।

बहादुरसिंह—पन्ना की भी यही इच्छा थी।

आशाशाह—छंदावत सरदार ! आप पश्चिमी सेना का संचालन करेंगे।

छंदावत सरदार—जो आज्ञा।

आशाशाह—जयसिंहजी ! मैं तथा आप उत्तर और दक्षिण की ओर से अपनी-अपनी सेनाओं को बढ़ाते हुए चले आवेंगे। इस प्रकार चारों ओर से बनवीर और उसकी शेष शक्ति को घेर लेना ही हमारा उद्देश्य होगा। चित्तौड़गढ़ के द्वार खुलते क्या देर लगेगी ? चलें, शीघ्रता करें।

["एकलिंग भगवान् की जय !" बोल-कर सबका जाना। नेपथ्य में रण-वाद्य और आवाज़ें। घबराए रणजीत का आना।]

रणजीत—आज प्राण न बचेंगे क्या ? मैंने व्यर्थ ही यह आपदा मोल लेकर बड़ी भूल की। इतने सरदार बनवीर से मुख मोड़कर चल दिए थे, मैं भी उससे विमुख क्यों न हो गया ? वह मेरा क्या कर लेता ? अब भी क्या कुछ हो सकता है ?

[जयसिंह का आना ।]

जयसिंह—ठहर ठहर, ओ पापी ! तू बनवीर के लिये भी सच्चा न हुआ । उसको इस विपत्ति के समय तू युद्ध से हाथ खींचकर इस कोने मे छिपा है !

रणजीत—छिपा नहीं हूँ, पर आपकी सहायता के लिये आपकी ओर से लड़ना चाहता हूँ ।

जयसिंह—चांडाल ! तू कायर ही नहीं स्वामिद्रोही भी है । मैं तुझे ही खोज रहा था, अपना शस्त्र सँभाल ।

रणजीत—किसलिये ?

जयसिंह—तू तो क्षत्रियत्व की दुहाई देता फिरता था । तू ही युद्ध के मैदान मे पूछता है, शस्त्र से क्या होगा ? मैं केवल तेरा अंत करने के लिये युद्ध-क्षेत्र मे आया हूँ ।

रणजीत—मैंने तुम्हारा क्या अपराध किया है ? यही कि मैं महाराना बनवीर का मित्र हूँ ।

जयसिंह—तुम महाराना विक्रम के भी मित्र रह चुके हो, और यदि जीवित ही छोड़ दिए जाओगे, तो महाराना उदयसिंह के भी मित्र बन जाओगे । इस समस्त रक्त-पात की जड़ मे तुम हो । शस्त्र सँभालो, अब तुम नहीं बच सकते ।

रणजीत—शस्त्र सँभाल लिया जायगा । तू स्वयं सावधान हो । रण के मैदान मे उपदेशक बनकर आया है ? अभिमानी ! चल ।

[दोनो का तलवारों से युद्ध करना ।

जयसिंह रणजीत को आहत करता है, रणजीत गिर पड़ता है।]

जयसिंह—कायर और चाटुकार, यही तेरा अंत है। [जाना चाहता है।]

रणजीत—ठहरो, ठहरो, मैं इस भेद को अपने साथ नहीं ले जाना चाहता।

जयसिंह—किस भेद को ?

रणजीत—[शीतलसेनी की लिखत देकर] लो, यदि बनवीर युद्ध के बाद जीवित ही रहे, तो यह उसे दे देना।

जयसिंह—यह क्या है ?

रणजीत—मेरा प्रधान मंत्री का पद, जो मुझे कभी न मिला। इसी के लिये मैंने तुम्हारे पिताजी की हत्या की थी।

जयसिंह—मेरे पिताजी के अब तक छिपे हुए वधिक ! अब तुझे क्या दंड दूँ ? जा, तुझे बदला मिल चुका।

रणजीत—[क्षीण स्वर में] क्षमा ! क्ष—मा ! [रणजीत की मृत्यु।]

जयसिंह—मैंने तुझे क्षमा भी किया, जा, चैन से सो। [इसी समय उस पेड की शाखा शीतलसेनी के भार से टूट जाती है। शीतलसेनी डाल के साथ ही भूमि पर गिर जाती है।] यह क्या पेड़ की शाखा टूट गई। इसके नीचे तो कोई स्त्री भी दबी पड़ी है। अभागिनी ! मर गई क्या ? [नेपथ्य को देखकर] वह शत्रु की सेना आ पहुँची, चलूँ।

[जयसिंह का आना। दोनो ओर के कुछ सैनिकों का लड़ते हुए प्रवेश और प्रस्थान। आशाशाह और बनवीर का लड़ते हुए प्रवेश और युद्ध करना, हठात् बहादुरसिंह का आना।]

बहादुरसिंह—ठहर-ठहर, मेरे लाल का वध करनेवाले पापी, तेरा अंत मेरे हाथ से हो।

[उदयसिंह का आना।]

उदयसिंह—नहीं-नहीं, चाचाजी! इसे मैं मारूँगा, इसने मेरे भाई चंदन के अतिरिक्त महाराना विक्रम का भी वध किया है।

[सहसा पन्ना का आना।]

पन्ना—शांत होओ, अपकार का बदला देना ठीक नहीं है। बनवीर के वध से न विक्रम लौट सकेगा, न चंदन ही जीवित होगा।

[बनवीर तलवार फेंककर युद्ध बंद कर देता है।]

बनवीर—अब नहीं, इस तलवार पर भी अब कोई आशा नहीं है। तुम सब मिलकर मेरा वध करो।

पन्ना—नहीं, बनवीर का वध न हो, इसे बंदी करो।

उदयसिंह—माता की आज्ञा शिरोधार्य है। सैनिक, बनवीर को बंदी करो।

[दो सैनिक आकर बनवीर को बंदी करते हैं, एक ओर से जयसिंह, दूसरी ओर से छंदावत सरदार का आना।]

जयसिंह—महाराना के सभी शत्रु पराजित हो गए।

छंदावत सरदार—चित्तौड़गढ़ के पथ में कोई भी बाधा नहीं रही।

सब—जय, मेवाड़ के महाराना को जय!

[सबके जाने पर अंत में बहादुरसिंह* सुँघनी सूँघते जाता है।]

दृश्य-परिवर्तन

षष्ठ दृश्य

राजतिलक

[सिंहासन पर उदयसिंह, बहादुरसिंह, आशाशाह, जयसिंह, चूंडावत सरदार आदि यथास्थान स्थित, पन्ना राजमुकुट लिए खड़ी है।]

पन्ना—यह दिन देखने की बड़ी साध थी। यही वह चिर-लालसा का राजमुकुट है। यह तुम्हारे मस्तक में सुशोभित हो, तुम चित्तौड़ के महाराना हुए उदय!

[पन्ना उदय को राजमुकुट पहनाती है।]

जयसिंह—तुम्हारी पवित्र बलि से यह दिन इतिहास में अमर हुआ मा!

पन्ना—सरदार जयसिंहजी! जिसे क्षण-भर के लिये भी छाती, गोद और दृष्टि से विलग नहीं किया था, आज मैं अपने उस धन को तुम्हे सौंप दूँगी।

आशाशाह—तुम्हारा यह दान उस बलि से कम नहीं।

पन्ना—जिस प्रकार राव कर्मचंदजी महाराना संग्रामसिंह के दाहने हाथ थे, उसी प्रकार तुम अब उदय के रक्षक रहोगे। आप अपने पिता के रिक्त आसन को पूर्ण करेंगे।

[दो सिपाहियों का बंदी बनवीर को लाना ।]

बहादुरसिंह—कौन, बनवीर !

पन्ना—आओ-आओ, इस राजतिलक के सबसे बड़े हर्ष में मैं तुम्हें मुक्त करती हूँ । प्रहरो ! बनवीर के बंधन खोल दो ।

उदयसिंह—मा ! मा ! तुमने यह क्या कहा ?

पन्ना—सच ही कहा है, अब कुछ भी भय नहीं है उदय !

[प्रहरी बनवीर को मुक्त करता है ।
बनवीर पन्ना के चरणों पर गिरता है ।]

बनवीर—तुम क्षमा करो, मा ! मैं तुम्हारा ही अपराधी हूँ ।

बहादुरसिंह—पन्ना ! इसने तेरे इकलौते बेटे चंदन का वध किया है, इसको क्षमा ?—

पन्ना—हाँ-हाँ, तुम भी क्षमा करो । उस क्षमा से यह राजमुकुट का उत्सव मंगलमय हो जायगा ।

बनवीर—चिंता न करो, उदय ! मैं इसी क्षण चित्तौड़ का त्याग कर मेवाड़ ही नहीं, राजस्थान से भी दूर चला जाऊँगा । तुम्हारे सुख में मेरी छाया भी न पड़ेगी । बिदा ! [जाना चाहता है ।]

जयसिंह—ठहरो बनवीर ! रणजीत मरते समय तुम्हें देने को कुछ दे गया था । लो । [शीतलसेनी की लिखत देता है ।]

[बनवीर का जाना ।]

बहादुरसिंह—हमारा यह आनंद-उत्सव नृत्य और गीत से खिल उठे । [घुँघरू सुनता है ।]

[बालाएँ आकर नृत्य-गीत आरंभ करती हैं।]

मालकोस—तीन ताल

चिरजीवी राज रहे राजन !

[१]

हो तुम पालक प्रेम-प्रीति के,
हो संचालक न्याय-नीति के,
बालक हो तुम पाप-भीति के,
बलि है तुम पर यह जीवन।

[२]

जग में छावे कीर्ति तुम्हारी,
शत्रु-हीन हो वसुधा सारी,
घर-घर गुण गावें नर-नारी,
हों प्रसन्न स्वर्ग के देवगण।

[३]

प्रजा सुखी होवे सुवेश में,
फैले कविता-कला देश में,
सज्जन पड़ें न कभी क्लेश में,
निर्मल औ' निर्भय होवे मन।

[बालाओं के स्थिर नाट्य पर—]

यवनिका







बालाएँ—
चिरजीवी
राज
रहे
राजन्!

राजमुकुट
तृतीय अंक की
य व नि का
[पृष्ठ १२६]

Ganga Fine Art Press, Lucknow

लेखक की अन्य पुस्तकें

१. वरमाला

हिंदी-नाटकों में साहित्य और अभिनय का संयोग बहुत कम मिलता है। इसमें दोनो बातें अपनी प्रौढ़ता पर पहुँची हुई हैं। कलकत्ते और मदरास आदि स्थानों में सफलता-पूर्वक अभिनीत हो चुका है। यही प्रथम हिंदी-नाटक है, जिसे रेडियो में ब्रॉडकास्ट होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। इसका अनुवाद गुजराती और तैलगू में भी हो चुका है। हिंदू-विश्व-विद्यालय में बी० ए० में पढ़ाया जाता है। अनेक रंगीन और सादे चारु चित्रों से सुसज्जित। तीन हजार का पहला संस्करण समाप्ति पर है! मूल्य ॥=), सुंदर जिल्द १=)

२. संध्या-प्रदीप

इस पुस्तक में (१) संध्या-प्रदीप, (२) फटा पत्र, (३) साहित्यिक छल, (४) गीत की प्रतियोगिता और (५) बहुत अच्छो, इन पाँच कहानियों का संग्रह है। इन कहानियों में कुछ ऐसी जान डालनेवाली शक्ति है कि पढ़नेवाले के दिल और दिमाग़, दोनो पर असर करती हैं। सभी कहानियाँ ऐसी सरल और परिमार्जित भाषा में लिखी गई हैं कि थोड़ा पढ़ा-लिखा भी समझ लेगा। मूल्य १), सजिल्द १॥)